नूतन निष्काम पत्रिका

नूतन निष्काम पत्रिका ❑ वर्ष-6 ❑ अंक-8 ❑ मुम्बई ❑ अगस्त-2015 ❑ मूल्य-रु.9/-

स्थापना वर्ष:१९४२

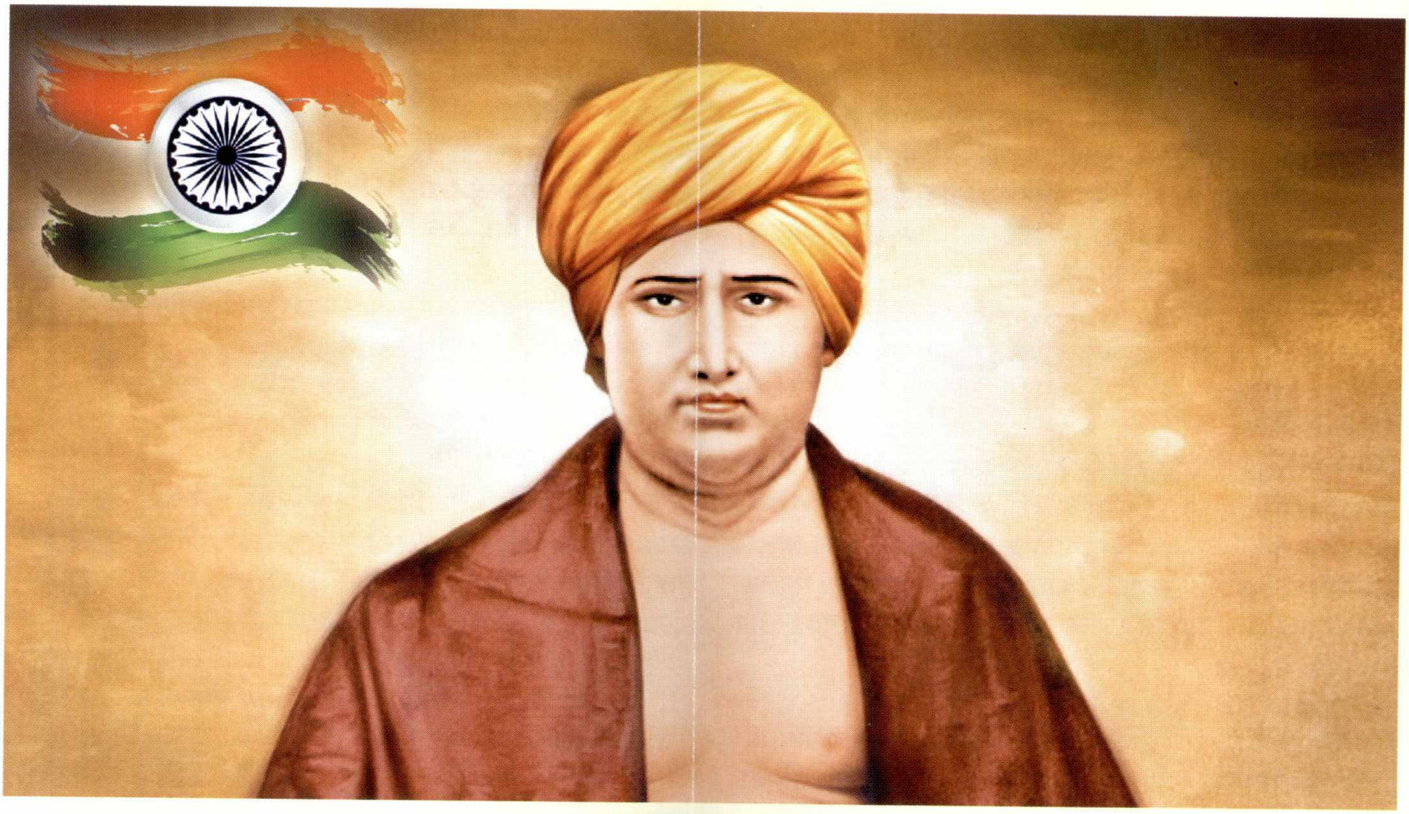

महर्षि दयानंद सरस्वती

खुदीराम बोस

अरविंद घोष

मदनलाल धिंगरा

नेताजी सुभाषचंद्र बोस

राजगुरु

भगतसिंग

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थ प्रकाश कब और क्यों रचा।

पं. उम्मेदसिंह विशारद

ऋषि दयानन्द जी का जन्म १८२४ ई. में हुआ था। वे १८६० में गुरु विरजानन्द जी के पास विद्याध्यन के लिए पहुँचे। उस समय उनकी आयु ३६ वर्ष की थी। १८६३ में उन्होंने अपने गुरु से दीक्षा ली और उनके पास से अध्ययन समाप्त कर जीवन क्षेत्र में उतर पड़े। इस समय वे ३९-४० वर्ष के हो चुके थे। गुरू विरजानन्द के पास उन्होंने जो कुछ सीखा वही वास्तविक शिक्षा थी क्योंकि इससे पहले वे जो कुछ पढ़ आये थे, उसे विरजानन्द जी ने भुला देने की उन से प्रतिज्ञा ली थी। इस प्रकार ऋषि दयानन्द जी की यथार्थ शिक्षा १८६० से १८६३ से १८६३ तक ३ वर्ष की हुई थी। उन्होंने अपने जीवन काल में जितने व्याख्यान दिये जितने ग्रन्थ लिखे, जितने शास्त्रार्थ किये वह इन तीन साल के अध्ययन का ही परिणाम था। आर्ष और अनार्ष का भेद अपने गुरू से पाया। इन तीन वर्षो के अध्ययन से उनके जीवन उनकी विचार धारा में क्रान्ति उत्पन्न कर दी उससे भारत के पिछले सौ वर्षो का इतिहास बन गया।

इस क्रान्ति का मूल स्रोत उनका ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश है। सत्यार्थ प्रकाश १८७४ में लिखा गया। मुरादाबाद के राजा जय कृष्णदास जब काशी में डिप्टी कलेक्टर थे तब ऋषि दयानन्द काशी पधारे थे। राज जयकृष्णदास ने ऋषि से कहा आपके उपदेशामृत से वही व्यक्ति लाभ उठा सकते है जो आपके व्याख्यान सुन सकते हैं। जिन्हे आपके व्याख्यान सुनने का अवसर नही मिलता उनके लिए आप अपने विचारों को ग्रन्थ के रुप में लिख दें तो जनता का बड़ा उपकार होगा। ग्रन्थ के छपने का भार राजा जयकृष्ण दास ने अपने ऊपर ले लिया। यह महत्वपूर्ण ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश कुल साढ़े तीन महीना में लिखा गया। पण्डित गुरूदत्त विद्यार्थी ने १४ बार बढ़कर कहा कि हर बार बढ़ने से एक नया रत्न हाथ आता है।

सत्यार्थ प्रकाश में ३७७ ग्रन्थों का हवाला है। इस ग्रन्थ में १५४२ वेद मंत्रों व श्लोकों का उदाहरण दिया गया है। चारों वेदों, सब ब्राह्मण ग्रन्थ, सब उपनिषद, छन्दों दर्शन, अठारह स्मृति, सब पुराण, सूत्र ग्रन्थ ग्रह्य सूत्र जैन, बौद्ध ग्रन्थ, बाईबल, कुरान सबका उद्धरण ही नही उनका रेफरेन्स भी दिया भी दिया है। इस ग्रन्थ में कौन सामान्य व श्लोक या वाक्य कहाँ है उसकी संख्या क्या है यह सब कुछ इस साढ़े तीन महीनों में लिखे ग्रन्थों में मिलता है। साधारण ग्रन्थ की बात दूसरी है, सत्यार्थ प्रकाश एक मौलिक विचारों का ग्रन्थ है। ऐसा ग्रन्थ जिसने समाज के एक सिरे से दूसरे सिरे तक हिलाकर रख दिया संसार को झकझोर दिया।

सत्यार्थप्रकाश चुने हुए क्रान्तिकारी विचारों का खजाना है। ऐसे विचार जिन्हे उस युग में कोई सोच ही नही सकता था। समाज की रचना ''जन्म'' के आधार पर न होकर कर्म के आधार पर होनी चाहिए। एक यही विचार इतना क्रान्तिकारी है कि इनसे ९० प्रतिशत समस्यायें हल हो जाती है। शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का विचार सत्यार्थ-प्रकाश की ही देन है। सत्यार्थ-प्रकाश के ८वें समुल्लास में लिखा है कोई कितना ही कहे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। जिन समस्याओं को लेकर हम उलझे रहते हैं, हरिजनों की समस्या, स्त्रियों की समस्या, गरीबी की समस्या, शिक्षा की समस्या, देश भाषा की समस्या, चुनाव की समस्या, नियम तथा व्यवस्था की समस्या, गौ रक्षा समस्या, नसबन्दी समस्या, आचार की समस्या आदि ऐसी कौन सी समस्या है जो सत्यार्थ-प्रकाश में नही है। आज जो समाज में जो कुछ अच्छा बुरा हो रहा है सब सत्यार्थ-प्रकाश में पहले से ही मौजूद है।

आर्ष और अनार्ष ग्रन्थों का निर्देश- सत्यार्थ प्रकाश में मिलता है। वेदों के सम्बन्ध में ऋषि दयानन्द की दूसरी खोज थी, कि वे वेदों के शब्द रुढ़ि नही योगिक है, मेक्समूलर सायण, उब्वट, महीधर, रांथ, विल्सन, ग्रासमेन आदि विद्वानों ने वेदों के अर्थो को इतिहास परक किया है। वह समय यज्ञों का था इसलिए भाष्यकार समाज से थे कि वेदों अग्नि, वायु, इन्द्र देवता सचमुच स्वर्ग से यज्ञों में पधारते हैं, और दान-दक्षिणा लेकर स्वर्ग में चले जाते हैं। पाश्चात्य् विद्वान कहने लगे कि वैदिक ऋषि जंगली थे, इसलिए अनेक देवताओं को पूजते थे। महर्षि दयानन्द ने इस विचारधारा को ठोकर मारकर गिरा दिया! वेदों से ही उन्होंने सिद्ध किया अग्नि आदि नाम भिन्न-भिन्न देवताओं के नही है एक परमेश्वर के ही ये भिन्न-भिन्न देवताओं के नही है एक परमेश्वर के ही ये भिन्न-भिन्न नाम है।

ऋषि दयानन्द का कहना था कि वैदिक शब्दों के तीन प्रकार के अर्थ होते हैं आधि भौतिक, आधिदैविक, तथा आध्यात्मिक उदाहरणार्थ इन्द्र का आधिभौतिक अर्थ अग्नि, विद्युत सूर्य आदि है, आधिदैविक अर्थ, राजा सेनापति, अध्यापक आदि देवीय गुण वाले व्यक्ति है, और आध्यात्मिक अर्थ जीवात्मा, परमात्मा आदि हैं।

इसी प्रकार अन्य शब्दों के विषय में भी कहा जा सकता है। इन कसौटी के सामने रखकर अगर वेदों को समझा जाये तो न उनमें इतिहास मिलता है और न बहुदेवतावाद मिलता है, न जंगलीपन, न विकासवाद मिलता है। वेदों का अर्थ समझने के लिए सदियों से जिस अन्धकार में हम रास्ता टटोल रहे थे, उसमें दयानन्द की दृष्टि ही इस अन्धकार को भेदकर यथार्थ सत्य पर जा पहुँची थी।

१९वीं शताब्दी में भारत में अनेक समाज सुधारक हुए। ऋषि दयानन्द राजाराम मोहन राय, केशवचन्द सैन, इसी युग की उपज थे, ये सब एक तरफ हिन्दु समाज के पिछड़ेपन को देख रहे थे, दूसरी तरफ पश्चिमी देशों की प्रगतिशीलता को देख रहे थे। यह सब देखकर वे हिन्दु समाज की रुढ़ियों की दासता से मुक्त करना चाहते थे। ऋषि दयानन्द तथा दूसरों की विचारधारा में भेद यह था कि जहाँ दूसरे हिन्दू धर्म, हिन्दू संस्कृति तथा हिन्दुत्व को ही समाप्त करने पर तुल गये, वहाँ ऋषि दयानन्द जी ने हिन्दुओं को हिन्दू ही रहते हुए उन्हें नवीनता के रंग में रंग दिया। कोई वृक्ष बिना जड़ के नही रह सकता। जड़ जाय तो वृक्ष बिना जड़ के नही रह सकता। तो वृक्ष गिर जाता है। जड़ को मजबूत बनाकर वृक्ष खड़ा रह सकता है। कोई समाज अपने भूत के बिना जी नही सकता। भूत में पैर जमाकर भविष्य की तरफ बढ़ना, पीछे भी देखना आगे भी देखना यह किसी समाज के जीवन का गुर है। ऋषि दयानन्द जी ने इसी गुर को पकड़ा था। पीछे वेदों की तरफ देखो, उसमें जमकर आगे भविष्य की तरफ पग बढ़ाओं। यदि भूत को छोड़ दोगे तो वृक्ष की जड़ कट जायेगी, भविष्य को नही देखोगे तो उठ नही सकोगे। यही ऋषि दयानन्द जी के सत्यार्थ-प्रकाश तथा वेदभाष्य का संदेश है।

लेख का कलेवर वैदिक संस्कृति का सन्देश नामक ग्रन्थ, लेखक प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार से लिया गया है।

गढ़ निवास मोहस मोहकमपुर (देहरादून) उत्तराखण्ड
मो. : ९४११५१२०१९

आर्य समाज सांताक्रुज़, मुम्बई का मासिक मुखपत्र
वर्ष : ६ अंक ८ (अगस्त-२०१५)

- दयानंदाब्द : १९२, विक्रम सम्वत् : २०७२
- सृष्टि सम्वत् : १,९६,०८,५३,११६

प्रबन्ध संपादक : चन्द्रगुप्त आर्य
संपादक : संगीत आर्य
सह संपादक : संदीप आर्य
कार्यकारी संपादक : विनोद कुमार शास्त्री
लालचन्द आर्य, रमेश सिंह आर्य,
यशबाला गुप्ता.

विज्ञापन की दरें : शुल्क

- पूरा पृष्ठ : रु. ३,०००/-
- एक प्रति : रु. ९/-
- १/२ पृष्ठ : रु. २,०००/-
- वार्षिक : रु. १००/-
- १/४ पृष्ठ : रु. १,५००/-
- आजीवन : रु. १०००/-
- विशेषांक की दरें भिन्न होंगी ।

वर्गीकृत विज्ञापन
रु. १०/- प्रति शब्द, न्यूनतम रु. ५००/-
चैक/डीडी/मनी आर्डर आदि 'आर्य समाज सान्ताक्रुज' के नाम से ही भेजें, मुंबई के बाहर के चैक न भेजे। विज्ञापन सामग्री १० तारीख तक भेजें। 'नूतन निष्काम पत्रिका' का मुद्रण ऑफसेट विधि से होता है।

पता : आर्य समाज सांताक्रुज़
(विठ्ठलभाई पटेल मार्ग) लिंकिंग रोड, सांताक्रुज़ (प.), मुंबई -५४. फोन : २६६० २८००, २६६० २०७५

अनुक्रमणिका	पृष्ठ सं.
महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थ	२
सम्पादकीय	३
हमारे हृदयों में क्रतु भरनेवाला ...	४-५
मराठवाडा के सुख निवारणार्थ ...	५
संध्या की महत्ता	६-७
विचार शक्ति का चमत्कार/महर्षि दयानन्द जन्म ..	७
प्राणायाम:	८-९
सोमरस आत्मकलश में प्रवेश करता हैं।	९
चाणक्यनीतिदर्पण:	१०-११
भगत सिंह	१२-१४
RESPIRATORY PROBLEMS	१४
वैदिक सहित्य मणिमाला	१५-१६
राष्ट्रभाषा स्वामिमान न्यास..	१६

सम्पादकीय

अवैदिक गुरू-पूर्णिमा

आर्य पर्व पद्धति में वैदिक पर्वों का वर्णन है। उस पुस्तक में एक जगह लिखा है कि जो वस्तु जिसको प्रिय होती है, उसी से उसकी पूजा और तृप्ति का तर्पण होता है। ऊपर ऋषियों और स्वाध्याय का अभेद्य वा समवाय सम्बन्ध दिखलाया जा चुका है, इसीलिये ऋषियों की अर्चा तृप्ति का तर्पण स्वाध्याय से बढ़कर और किसी वस्तु से नहीं हो सकता।

आगे एक जगह लिखा है कि वैदिक काल में वेदों के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों की अविद्यमानता वा विरलता के कारण वेदों और वैदिक साहित्य के ही पठन-पाठन का विशेष प्रचार था। वैसे लोग नित्य ही वेद पाठ में रत रहते थे, किन्तु वर्षाऋतु में वेद के पारायण का विशेष आयोजन किया जाता था। इसका कारण यह था कि भारतवर्ष वर्षाबहुल तथा कृषिप्रधान देश है। यहाँ की जनता आषाढ़ और श्रावण में कृषि के कार्यों में विशेषतः व्यस्त रहती है। श्रावणी (सावनी) शस्य की जुताई और बुवाई आषाढ़ से प्रारम्भ होकर श्रावण के अन्त तक समाप्त हो जाती है। इस समय (श्रावण पूर्णिमा पर) ग्रामीण जनता कृषि के कार्यों से निवृत्ति पाकर तथा भावी शस्य के आगमन से आशान्वित होकर चित्त की शान्ति और अवकाश लाभ करती है। क्षत्रियवर्ग भी इस समय दिग्विजय यात्रा से विरत हो जाता है। वैश्य भी व्यापार, यात्रा, वाणिज्य और कृषि से विश्राम पाते हैं। इसीलिये इस दीर्घ अवकाश काल में विशेष रूप से वेद के पारायण और प्रवचन में जनता प्रवृत्त होती थी। उधर ऋषि मुनि, संन्यासी और महात्मा लोग भी वर्षा के कारण अरण्य और वनस्थली को छोड़कर ग्रामों के निकट में आकर रहने लगते थे और वहीं वेदपठन, धर्मोपदेश और ज्ञानचर्चा में अपना चातुर्मास्य (चौमासा) बिताते थे। ---------- इत्यादि।

पाठकों के सामने इन पंक्तियों को उद्धृत करने का उद्देश्य यही है कि हम अपनी वैदिक संस्कृति और उनसे उपजे पर्व त्यौहारों के स्वरूप को समझें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने हमें अपने वैदिक धर्म के सही सच्चे स्वरूप का स्मरण कराया। वैदिक संस्कृति के आधार पर ही हमारी आर्यावर्तीय संस्कृति परम्परा का विकास होगा किन्तु इसके विपरीत यदि हम अनार्ष, पोंगापंथियों के स्वार्थवश बताये हुये मार्गों पर चलेंगे तो अवैदिक कार्यों में पड़कर अपनी संस्कृति के मूल स्त्रोत से भटकते जायेंगे जिसका परिणाम आने वाली पीढियों के लिये दिमागी खोखलेपन में परिणीत हो जायेगा।

आर्य समाज के सिद्धान्त वैदिक व्यवस्था पर आधारित हैं।किन्तु हम स्वाध्यायशील न बनकर सिद्धान्तों से समझौते करते जायेंगे तो पाखण्डी लोग आर्य समाजों में ही अपने पैर पसारने शुरू कर देंगे। गुरू पूर्णिमा का प्रत्यक्षतः वैदिक संस्कृति से कोई संबंध नहीं है। यदापि गुरू शिष्य का पवित्र संबंध वैदिक है किन्तु एक विशेष दिन गुरू को ब्रह्मा का दर्जा देना, धन एकत्रित करना, अपनी पूजा करवाना, यह सब अवैदिक और पाखण्ड कर्म हैं। इस तरह के कर्मों के प्रभाव के आड़ में स्वार्थी, धूर्त, पाखण्डी लोग अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं और अज्ञानी, भोली भाली जनता को बेवकूफ बनाते है। आज भय यह है कि गुरू शिष्य जैसे पवित्र संबंधो की आड़ में आर्य समाज में भी गुरू पूर्णिमा का अवैदिक पाखण्ड पनपने का भय है।इस ओर यदि हम सचेत नहीं रहेंगे तो आर्य समाज का औचित्य ही क्या रह जायेगा !

- संगीत आर्य- 9323 573 892

हमारे हृदयों में क्रतु भरनेवाला

आचार्य प्रियव्रत

वनेषु व्य१न्तरिक्षं ततान
वाजमर्वत्सु पय उस्रियासु ।
हृत्सु क्रतुं वरुणो अप्स्व१ग्निं
दिवि सूर्यमदधात् सोममद्रौ ।।२।।

अर्थ-**(वरुणः)** उस वरुण भगवान् मे **(वनेषु)** जंगलों में **(अन्तरिक्षम्)** जल को **(विततान)** फैलाया है **(अर्वत्सु)** घोड़ो में **(वाजम्)** बल रक्खा है **(उस्रियासु)** गौओं में **(पयः)** दूध रक्खा है **(हृत्सु)** हमारे हृदयों में **(क्रतुम्)** काम करने की शक्ति दी है **(अप्सु)** जलों में **(अग्निम्)** विद्युत् को **(दिवि)** द्युलोक में **(सूर्यम्)** सूर्य को और **(अद्रौ)** पर्वतों पर **(सोम)** सोम औषधि को **(अदधात्)** रक्खा है।

हम जिधर निहारें उधर ही वरणीय प्रभु की अद्भुत महिमा दृष्टिगोचर होती है। विश्व का एक-एक पदार्थ उनकी महिमा का बखान कर रहा है। यह लो, इन जंगलो की ओर देखो, भगवान् ने इनके भीतर अनन्त जल भरकर फैला रक्खा है। पहाड़ों और मैदानों में फैले हुए जंगलों पर जब बादल वर्षा करते हैं, तब वर्षा का पानी धरती में छिपे हुए वृक्षों की जड़ों के जालों की सहायता से मिट्टी में समा जाता है। पीछे से यह मिट्टी में समाया हुआ पानी रिस-रिसकर झरनों और नालों के रुप में बहने लगता है और छोटी-छोटी धाराएँ मिलकर फिर विशाल नदियों के रूप मे चलने लगती हैं, फिर इन नदियों से हम अनेक लाभ लेते हैं। वृक्षों की जड़ों द्वारा मिट्टी में समाये हुए पानी का एक और लाभ यह होता है कि धरती देर तक गीली रहती है जिससे हमारे पशुओं के चरने के लिए प्रचुर मात्रा में घास उत्पन्न होती है। यदि भगवान् जंगलों की रचना करके इस प्रकार मिट्टी में पानी समा जाने की व्यवस्था न करते तो वर्षा होते ही सारा पानी एक दम बहकर समुद्र में चला जाया करता। परिणाम यह होता कि हमारी नदियाँ निरन्तर न चल सकतीं और पशुओं को खाने के लिए यथेष्ट घास भी न मिल सकती। वैज्ञानिकों का कहना है कि जंगल वर्षा होने में भी सहायता करते हैं। जिन देशों में जंगल अधिक होते हैं, वहाँ वर्षा अपेक्षाकृत अधिक होती है। जंगलों के जो और लाभ हैं वे तो हैं ही। जंगलों को इस प्रकार विस्तीर्ण जलराशि का आधार बनाकर वरुण प्रभु ने अपनी अद्भुत लीला का परिचय दिया है।

यही नहीं, जिस पदार्थ को देखो वही प्रभु की महिमा के गीत गा रहा है। इन घोड़ों को देखो, इनमें कितना बल और वेग है। घोड़ों का यह बल और वेग हमारे कितने काम आता है। घोड़ों में यह बल और वेग किसने भरा है ? उसी प्रभु ने। घोड़े साधारण घास खाते हैं और साधारण पानी पीते हैं, परन्तु उनके शरीर में प्रभु ने ऐसी व्यवस्था रक्खी है कि वही साधारण घास-पानी उनमें जाकर उन्हें असीम बली और वेगशाली बना देता है। इन गौओं को ही देखो। ये हमारे लिए कितना मधुर और शक्तिदायक दूध देती हैं। गौओं में दूध देने की यह शक्ति किसने रक्खी है ? उसी वरुण प्रभु ने। गौएँ साधारण घास खाती हैं और साधारण पानी पीती हैं, परन्तु प्रभु ने उनके शरीर मे ऐसी अद्भुत वैज्ञानिक व्यवस्था रक्खी है कि यह खाया-पीया साधारण घास-पानी वहाँ जाकर सुधासदृश दूध में परिणत हो जाता है।

और लीजिए इन जलों को ही देखिए। इनकी प्रकृति कितनी शीतल, शान्त और मधुर है। कौन कह सकता है कि कभी जल भी आग उत्पन्न कर सकता है, परन्तु प्रभु ने इन्हीं जलों में विद्युत् नामक अग्नि उत्पन्न करने की अद्भुत शक्ति भर रक्खी है। वर्षाकालीन मेघ-जलों में तो हम गर्जती और कड़कती हुई भयावह विद्युदग्नि की क्रीड़ाएँ देखा ही करते हैं। वैज्ञानिक लोग जल-धाराओं से यन्त्र चलाकर यों असीम विद्युत्-राशि उत्पन्न कर लिया करते हैं। इस प्रकार प्राप्त की हुई विद्युत् जहाँ हमारे घरों और नगरों को अलोकित करने आदि के अनेक परमोपयोगी कार्य करती है, वहाँ उसका दुरूपयोग करके उसके भीषण तेज से असंख्य प्राणियों का संहार भी किया जा सकता है। जलों में विद्युत् नामक विराट् अग्नि उत्पन्न करने की शक्ति उस प्रभु की महामहिमा के ही तो गीत गा रही है।

लो और देखो, आकाश में यह सूर्य किसने चढ़ा रक्खा है। इस सूर्य के प्रकाश और गरमी से ही धरती के सब प्राणियों और वनस्पतियों का जीवन चल रहा है। यदि धरती पर निरन्तर सूर्य का प्रकाश और उसकी गर्मी न पहुँचती रहे तो यहाँ प्रलय मच जाए। धरती के लिए अनवरत जीवन की वर्षा करनेवाला यह सूर्य किसने बनाया है और फिर इसका आकाश में धारण कौन कर रहा है? इसका रचयिता और धारयिता वही महिमाशाली प्रभु है।

तनिक इन पर्वतों को देखिए। इनपर सोम नामक ओषधि उगती है। इस ओषधि में अद्भुत गुण होते हैं। सोम ही क्यों, सोम तो एक उपलक्षण है। पर्वतों पर अमृत-जैसे गुणोंवाली असंख्य ओषधियाँ उगती हैं, जिनके सेवन से हमारे भाँति-भाँति के रोगों का विध्वंस होता है और शरीर में नई शक्ति का संचार होता है। पर्वतों में इन ओषधियों को कौन उगाता है? पर्वतों में हमारे कल्याण के लिए भरा हुआ यह सोम आदि ओषधियों का भण्डार उस वरुणप्रभु की महिमा का ही तो गौरव-गान कर रहा है।

दूर क्यों जाएँ, स्वयं अपने जीवन पर ही हम तनिक दृष्टि डालकर देखें। हमारे जीवन की छोटी और बड़ी सब क्रियाएँ हमारे हृदय पर निर्भर करती हैं। हमारा जीवन ही हृदय पर निर्भर करता है। हृदय के होने से ही हम जीते रह सकते हैं। एक प्रकार से जीवन हृदय का ही दूसरा नाम है। अपने शरीरों के इस हृदय नामक अङ्ग को हम तनिक अध्ययनात्मक सूक्ष्मदृष्टि से देखें। हमारे इस हृदय में कितना क्रतु है, कितना काम करने की शक्ति है। हमारा हृदय शरीर के रक्त को शुद्ध करने तथा उसे सदा गति में रखने के लिए आवश्यक मांसपिण्ड का बना हुआ एक छोटा सा यन्त्र है। इसका अपना भार कुल साढ़े तीन छटाँक के लगभग होता है। इस छोटे से यन्त्र में काम करने की असीम शक्ति है। रक्त को अन्दर खींचने और बाहर धक्का देने के लिए यह सदा खुलता और सिकुड़ता रहता है। एक मिनट में यह कोई ७२ बार खुलता ओर सिकुड़ता है। दिन-रात में इसकी इस प्रकार की गतियाँ एक लाख बार होती

हैं और सब यन्त्रों को विश्राम की आवश्यकता होती है, परन्तु यह अद्भुत यन्त्र बिना विश्राम के निरन्तर जीवन भर चलता रहता है। यह अपनी प्रत्येक गति में दो औंस रक्त धकेलता है। इस प्रकार एक मिनट में छह पौंड और दिन-रात में कोई छह टन रक्त हृदय में से गुजरता है। रक्त के इस प्रेषण में हृदय को जितनी शक्ति लगानी पड़ती है, उसका अनुमान इससे हो सकता है कि १२० मिलीमीटर पारे को उठाने में जितनी शक्ति लगती है उतनी शक्ति निरन्तर लगाते रहकर इसे रक्तसञ्चार की क्रिया करनी पड़ती है। शरीर का सारा रक्त दो मिनट में एक बार हृदय में से होकर चला जाता है। इस प्रकार हृदय को वर्षभर में और किसी व्यक्ति के सारे जीवन में कितना काम करना पड़ता है, इसका सहज ही अनुमान हो सकता है। हृदय के इस छोटे-से यन्त्र में काम करने की इतनी शक्ति किसने रक्खी है? महिमाशाली वरूण भगवान् ने।

यह तो हुआ हृदय का शारीरिक अर्थ। यदि हम हृदय का अर्थ मन या आत्मा करें तो भी हम देखते हैं कि हमारी आत्मा में असीम क्रतु है। काम करने की असीम शक्ति है। जो लोग अपने आत्मा की इस शक्ति को पहचानकर उससे काम लेते हैं, वे अपने प्रभाव से संसार का रंग पलट देते हैं और अक्षय कीर्तिवाले महापुरुष कहलाते हैं। हमारे आत्मा में यह असीम शक्ति, जिसे कोई पहचानते हैं और कोई नहीं पहचानते, कहाँ से आती है? हमें इस शक्ति को देनेवाला अक्षय भण्डार वही वरुणप्रभु हैं।

हमने मन्त्र के अन्तरिक्ष शब्द का अर्थ यहाँ जल कर दिया है। ऋषि दयानन्दजी ने अपने भाष्य में इसका यही अर्थ किया है। सामान्यत: इसका अर्थ आकाश होता है। निघण्टु में जो आकाश के वाचक नाम गिनाये हैं, उनमें अनेक ऐसे हैं जो जल के भी वाचक हैं। इसी प्रकार वहाँ जो जल के वाचक नाम गिनाये हैं, उनमें अनेक ऐसे भी हैं जो आकाश के भी वाचक हैं। इससे यह अनुमान होता है कि यास्कादि प्राचीन ऋषियों की दृष्टि में आकाश और जल के नाम वेद में एक-दूसरे के अर्थों में प्रयुक्त हुए हैं। कहाँ आकाश अर्थ होगा और कहाँ जल अर्थ होगा इसका निर्णायक प्रसङ्ग होगा। इसी आधार पर ऋषि दयानन्दजी ने यहाँ अन्तरिक्ष का अर्थ आकाश न करके जल कर दिया है, क्योंकि आकाश अर्थ करने पर कोई बात नहीं बनती। सायणाचार्य आदि ने ''**वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान**'' का अर्थ किया है- ''वृक्षों पर आकाश फैलाया।'' एक तो यह बात कुछ नहीं बनी और दूसरे यह अर्थ मन्त्र के दूसरे खण्डों की रचना से भी मेल नहीं खाता। दूसरे खण्डों में घोड़ों में बल, गौओं में दूध, जलों में बिजली आदि जो बातें कही गई हैं उन सबमें एक चीज़ दूसरी के अन्दर रहती है, परन्तु सायणाचार्य के अर्थ में आकाश वृक्षों में नहीं रहता, फिर उनके अर्थ में कोई चमत्कार भी प्रतीत नहीं होता, इसलिए हमने यहाँ अन्तरिक्ष का अर्थ जल कर दिया है। अन्तरिक्ष शब्द की निरुक्ति आकाश और जल दोनों अर्थों में चरितार्थ हो जाती है। ''अन्त आक्षियति अन्तरिक्षम्''- जो किसी के बीच में रहे उसे अन्तरिक्ष कहते हैं। आकाश द्युलोक और पृथिवी के बीच में रहता है, इसलिए अन्तरिक्ष है। जल भी सब पदार्थों में व्याप्त रहता है, इसलिए वह भी अन्तरिक्ष है।

हे वरणीय प्रभो! महापुरुषों के हृदयों में जो क्रतु, जो क्रियाशक्ति, आप भर दिया करते हैं, वह हमारे हृदयों में भी भर दीजिए।

मराठवाडा के सुख निवारणार्थ पर्जन्यवृष्टि महायज्ञ संपन्न

आर्यसमाज संभाजीनगर (औरंगाबाद) महाराष्ट्र कि ओर से खडकेश्वर महादेव मंदिर के प्रांगण में, दिं. १६ जून से २२ जून तक यज्ञ चलता रहा)

जिसमें १६ जून को प्रात: १० बजे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के शहर संघचालक डॉ. उपेन्द्रजी अष्टपुत्रे के करकमलों द्वारा ध्वजारोहण किया गया। तदनन्तर देवराज इंन्द्रजगी मे पूज्य स्वामी विरजानंद यज्ञशाला में यज्ञ के ब्रह्मा डॉ. कमलनारायण जी आर्य (रायपुर) डॉ. प्रद्युम्नजी आर्य (रांची) झारखंड, पं. सुरेन्द्र पालजी आर्य नागपुर के पौरोहित्य में मा. प्रधान जुगलकिशोरजी दायमा, मा. मंत्री दयाराम राजारामजी बसैये, मा. कोषाध्यक्ष ॲड. जोगेन्द्रसिंह चौहान व श्री. ओमप्रकाश रा. बसैये, मा. जगन्नाथजी बसैये के यजमानत्वमें यज्ञारंभ हुवा। इस यज्ञ में शुद्ध गौधृत व ८४ प्रकार की वनौषधियाँ हरी और धीयो द्वारा प्रतिदिन सुबह ११ से सायं ४ बजेतक ज्ञय चलता रहा। जिसमें ५५० यजमान दंपत्तीने सहभाग लिया। दि. २१ को अन्तरराष्ट्रीय योगदिननिमित्त योगाचार्य दयाराम बसैये के नेतृत्वमें आचार्य संतोष हीरास के उपस्थिति में योगासन व प्राणायाम वर्ग लिया गया। जिसमें सैकडों लोगो ने भाग लिया।

दि. २२ जून के यज्ञ की पूर्णाहुति शहर के श्री कृष्ण मंदिर महानुभाव आश्रम की अध्यक्षा पूज्य सुभद्रा अत्वा कपाटे अखिल भारतीय महानुभाव युवा परिषद के अध्यक्ष संतोष मुनि कपाट, कबीर मठ के महन्त शांतीदास महाराज, महन्त श्यामल हरिगिरीजी महाराज संस्थान गोसाई पांगरी पू. आनंदगिरी महाराज पारधेश्वर मंदिर, ह.भ.प. नवनाथ महाराज आंधळे, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभाके श्री. उग्रसेनजी राठोड (परली) मा. जयकीशोर डौडीया मा. प्रधान, महाराष्ट्र विधान सभा के अध्यक्ष मा. श्री. हरिभाऊजी बागडे इन्होंने गौपूजन अश्वपूजन से यज्ञ में आहुतीया दाली, आर्यसमाज द्वारा उनका सन्मान किया गया मा. मुख्यमंत्री श्री. देवेन्द्रजी फडनवीसजी ने शुभेच्छा भेजी भा.ज.पा. प्रान्तअध्यक्ष श्री. रावसाहेब दानवेजीने दूरभाष से शुभेच्छा भेजी।

जुगलकिशोरजी दायमा, भाऊ सुरडकर, जगन्नाथ बसैये, ओमप्रकाश बसैये, कन्हैयालाल सिद्ध, श्रीराम मंदिर पूर्व अध्यक्ष ॲड. उत्तमराव मनसुटे, नारायणसिंह होलिये के उपस्थिति में हिन्दूराष्ट्र नेपाल में आये हुवे भूकंप के लिये शहरमें से कुछ धार्मिक संस्थाओं द्वारा आर्यसमाज के नेतृत्व में जमा हुवी राशी ६६,५०० (छ:सष्ठ हजार पाँचसो) की राशी विश्वहिंदू परिषद के मंत्री प्रा. व्यंकटेश आबदेवजी के उपस्थिति में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली को डी.डी. द्वारा आर्यसमाजद्वारा चल रहे काठमांडू के राहत शिबिर के लिये दिये गये। सभी मान्यवरों ने आशिर्वाद संबोधन किया। इस पश्चात यज्ञ की पूर्णाहूति हुई। ऋषि लंगर हुआ इस में शहर के गणमान्य लोक उपस्थित रहे।

दयाराम राजाराम बसैये बंधू
मंत्री - आर्य समाज संभाजीनगर

संध्या की महत्ता

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

पंच महायज्ञों में सबसे पहला ब्रह्म-यज्ञ है। ब्रह्म-यज्ञ का मुख्य भाग है संध्या। 'महायज्ञ' का 'महा' शब्द बताता है कि यह महायज्ञ बड़ा यज्ञ है जिसमें सैकड़ों कृत्यों का करना आवश्यक होगा और बहुत-सा धन तथा रुपया लगता होगा। वस्तुत: यह बात नहीं है। यह पंच महायज्ञ बहुत छोटा है। इसको 'महायज्ञ' कहने का हेतु यह है कि **मनुष्य की इतिकर्त्तव्यता में यह सबसे प्रथम है और इसके करने से मनुष्य का आचार और अध्यात्म बनता है।**

संध्या का अर्थ है **ध्यान करना अर्थात् परमात्मा के गुण, कर्म और स्वभाव के विषय में इस प्रकार सोचना कि हम परमात्मा के अस्तित्व का इस जगत् में और अपने जीवन में अनुभव कर सकें।** इसलिये **'मन से चोचना'** संध्या का मुख्य उद्देश्य है। शेष सब कृत्य गौण हैं, मौलिक नहीं।

संध्या के तीन भाग है- (१) शारीरिक, अर्थात् स्नानादि करके एकान्त में जहाँ ऊँची-नीची भूमि न हो, कोलाहल न हो, पूरी शान्ति विराजती हो, आसन जमाकर बैठना। हथेली पर पानी लेकर तीन 'आचमन' करना, या शरीर के अन्यान्य अवयवों पर छींटे देना।

(२) दसरा भाग है- वाचिक, अर्थात् ऊपर के लिखे हुए कृत्यों को करते हुए नियत मन्त्रों को पढ़ना।

(३) तीसरा भाग है- मानसिक अथवा भीतरी, अर्थात् अर्थ समझते हुए ईश्वर के गुणों का चिन्तन करना। इनमें सबसे आवश्यक भाग है तीसरा। यदि यह तीसरा भाग उचित रीति से सम्पन्न न किया जाय, तो संध्या सर्वथा निष्फल हो जाती है, क्योंकि 'संध्या' का अर्थ है 'स+ध्या' या 'अच्छे प्रकार ध्यान करना'। यदि ध्यान नहीं तो कुछ भी नहीं। केवल आचमन करना या आसन जमाना या पानी छिड़क लेना संध्या नहीं है। न इससे कोई लाभ है। यह केवल एक तैयारी है।

संध्या क्यों करनी चाहिये? ईश्वर की खुशामद के लिए नहीं। ईश्वर आनन्दस्वरूप है। यह गुण उसमें सदा बना रहता है। आप उसको हर्षित नहीं कर सकते और न वह संध्या न करने वालों से क्रोध करता है।

जिस प्रकार आप शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भोजन करते हैं (किसी को खुश, या नाराज करने के लिए नहीं), इसी प्रकार **आध्यात्मिक और मस्तिष्क के स्वास्थ्य के लिए आप संध्या अर्थात् ईश्वर के गुणों का 'ध्यान' करते हैं।** ईश्वर सबसे पूर्ण, सबसे पवित्र और सबसे उत्कृष्ट सत्ता है। इसके गुणों से आपका **मन शुद्ध होगा। मन के शुद्ध और पवित्र होने से बुरे कर्म न होंगे। बुरे कर्म न होने से आपको आन्तरिक आनन्द की प्राप्ति होगी। यदि आप संध्या न करेंगे तो आपका मन संसार के प्रपंच में लगा रहेगा, विचार दूषित होंगे और पापों से प्रेम होगा।**

इसका परीक्षण तो आप सुगमता से कर सकते हैं। यदि आप अच्छे लोगों के साथ बैठना छोड़ दें तो धीरे-धीरे आप बुरे लोगों की संगति में बैठने लगेंगे और इन्हीं के-से आपके विचार हो जायेंगे।

जब हम ईश्वर के गुणों का ध्यान करते हैं तो हमारा मन बुरी बातों से बचा रहता है। यही संध्या करने का वास्तविक लाभ है।

आप गुलाब के बाग में सैर किजिये। उसकी सुगन्ध आपके मस्तिष्क को सुरभित करेगी। आप न तो गुलाब की खुशामद करते हैं, न गुलाब के गुणों में आधिक्य करते हैं। लाभ आपको होता है। आप गुलाब पर अहसान नहीं करते, अपितु आप स्वयं गुलाब के ऋणी होते हैं। इसी प्रकार जब हम ईश्वर की महिमा पर विचार करने लगते हैं और उसके विषय में सोचने लगते हैं तो हमारे हृदय में उसके लिए प्रेम हो जाता है। ईश्वर के प्रेम से दुर्व्यसनों से घृणा हो जाती है। आपमें ईश्वर की पवित्रता का प्रवेश हो जाता है। सदाचारी स्वामी का सेवक स्वभावत: अनाचार से घृणा करता है। गुलाब के बाग में सुगन्धित वातावरण में रहनेवाले लोग दुर्गुणों को सहन नहीं कर सकते।

ईश्वर की उपासना से मनुष्य में शक्ति और साहस की उत्पत्ति होती है। अपने बाप के कन्धे पर बैठा हुआ बच्चा अपने को ऊँचा और साहसी समझने लगता है। **ईश्वर की सत्ता का अनुभव करनेवाला उपासक किसी से डरता नहीं-**

हमारे साथ है प्यारा हमारा,
तकें हम और का फिर क्यों सहारा?
हमारी जिन्दगी का वह सहारा,
हमारी मौत में भी वह हमारा।।

जो लोग यह समझते हैं कि हम उपासना करते हैं ईश्वर को खुश करने के लिए, वे उपासना के तत्त्व को नहीं समझते।

कुछ लोगों की धारणा है कि यदि हम ईश्वर की उपासना करेंगे तो ईश्वर हमारे पापों को क्षमा कर देगा। इस विचार ने दुनिया को धोखे में डाल रखा है, बहुधा उपासक लोग बुराई की ओर प्रवृत्त हो जाते हैं। हमको याद रखना चाहिये कि ईश्वर न्यायकारी है। वह हर काम का भला या बुरा फल देता है, वह रिश्वत नहीं लेता। उपासना या संध्या रिश्वत नहीं है।

कुछ लोग जब किसी विपत्ति में होते हैं तो ईश्वर से शिकायत करते हैं कि हम तो दोनों समय संध्या करते हैं, ईश्वर ने हमको यह तकलीफ क्यों दी? यदि हमपर दु:ख-पर पड़ते हैं तो हम ईश्वर की उपासना ही क्यों करें? बहुत-से लोग ईश्वर की उपासना छोड़ बैठते हैं। एक युवक ने शिकायत की कि मेरा बाप ईश्वर का उपासक और सदाचारी था। वह युवा-अवस्था में क्यों मर गया? यदि ईश्वर के उपासकों की यही गति होती है तो वह अच्छे हैं जो कभी उपासना नहीं करते। ऐसी शिकायत करने वाले लोग सत्यता को नहीं सोचते।

हमारे दु:ख हमारे पापों के फल हैं। बदपरहेजी करनेवाला उपासक बदपरहेजी के फल से बच नहीं सकता। अचानक मर जाना किसी कर्म का शुभ-अशुभ फल होगा। बहुत सम्भव है कि मरनेवाले को उसके पुण्य कर्मों के बदले अधिक उत्कृष्ट जीवन मिल जाय। यह तो ईश्वर ही जान सकता है।

यदि आप संध्या करने से सदाचारी नहीं बन सके तो संध्या के करने में कोई त्रुटि रह गई होगी, या आपका मन इतना मैला है कि उसके लिए अधिक और निरन्तर साबुन से रगड़ने की आवश्यकता है। हमको अपने मन को मैल छुड़ाना है। मन का मैल तो ज्ञान अर्थात् सोचने और विचार करने से ही छूट सकेगा-

जोगी जुगत जानी नहीं, कपड़े रंगे तो क्या हुआ!

यदि ईश्वर की रचना पर विचार नहीं किया, उसके अनुग्रहों पर ध्यान नहीं दिया और केवल आसन जमाकर ऊपर कृत्यों को करते रहे तो यह संध्या नहीं है। मत समझो कि जो विविध प्रकार के आसन करता है वह योगी है। आसन तो नट भी कर सकते हैं। जो लोग आसनों को दिखा-दिखाकर लोगों से प्रशंसा की इच्छा करते हैं वे अपने को और संसार को धोखा देते हैं। संध्या नुमाइश (प्रदर्शिनी) नहीं है। प्रदर्शिनी संध्या नहीं है। आप चाहे उच्च स्वर से मन्त्र पढ़े चाहे चुपचाप, दोनों प्रकार ठीक हैं, परन्तु शर्त यह है कि आपका मन संध्या में लगा रहे, और वह दिखाने के लिए न हो। **आप अपने मन को टटोलते रहें और बारम्बार ईश्वर के गुणों का ध्यान करते रहें। संध्या के मन्त्रों में ईश्वर के गुणों का ध्यान ही बताया गया है।** संध्या में मन्त्रों को इस क्रम से रखा गया है कि आपको मन के वश में करने में सहायता मिलेगी।

एक बात याद रखनी चाहिये, मन बड़ा चंचल होता है। आप इसे सुगमता से एकाग्र नहीं कर सकते, परन्तु निरन्तर अभ्यास से सफलता प्राप्त हो सकती है। आपका मन सांसारिक वस्तुओं की ओर क्यों जाता है? इस प्रश्न पर थोड़ा-सा विचार कीजिये। सांसारिक वस्तुएँ मीठी लगती हैं। उसके रस में एक आकर्षण होता है। बच्चे को मिठाई दो, वह तुमसे प्रेम करने लगेगा। इसी प्रकार यदि हम निरन्तर ईश्वर-प्रदत्त अच्छी चीजों पर विचार करें तो हमको ईश्वर से प्रेम हो जायेगा। माँ-बाप हमको अच्छी-अच्छी चीजें देते हैं और हमारी भूलों पर हमको ताड़ना भी देते हैं। जो लड़के अपने माता-पिता की ताड़ना पर दृष्टि रखते हैं और उनके अनुग्रहों की उपेक्षा करते हैं, वे माता-पिता के प्रतिकूल हो जाते हैं और बहुत-से दुराचरणों के शिकार हो जाते हैं। जो लोग कभी नहीं सोचते कि ईश्वर ने उनको कैसी-कैसी अच्छी चीजें दी हैं वे सदैव यही शिकायत करते हैं कि उनको अमुक-अमुक दु:ख है। उनके हृदय में ईश्वर की ओर से भय हो सकता है; उसके लिए भक्ति या प्रेम नहीं हो सकता। संध्या के मन्त्रों में बताया गया है कि ईश्वर का प्रेम उसके उपकारों से प्रमाणित होता है। ईश्वर के उपकार अनगिनत हैं। शर्त यह है कि हम उनपर विचार करें। जो बच्चा यह तो सोचता है कि उसकी माता ने उसको कितनी बार झिड़का, पर कभी यह नहीं सोचता कि माता ने कितने 'प्रेम से उसे खाना खिलाया, दूध पिलाया या रक्षा की' वह मातृ-भक्त नहीं बन सकता; और उसके लिए उसे दण्ड उठाना पड़ेगा-

हमारी तंगनजरी ही हमारे दुख का कारण है,
वगरना कम नहीं बंदो पै उसके नेऽमतें उसकी।

अर्थात् हमारे दु:खों का कारण हमारी तंग-दृष्टि है, अन्यथा ईश्वर के उपकार मनुष्यों के ऊपर कम नहीं हैं।

विचार शक्ति का चमत्कार

(हर विचार का उदभव स्थान अंत: करण है)

चित्त में से भावनाओं के जरिये स्वाभाविक रुप से उठते विचार बुद्धि का बल पाकर नैमित्तिक शक्ति प्राप्त करते है। ये विचार ईधन का रुप हैं, जैसे बिना पेट्रोल के गाडी नहीं चल सकती, ठहर जाती है उसी तरह बिना विचारों के जीवन ठहर जाता है। ढ़ेर सारा धन या ढ़ेर सारा सुख प्राप्त कर लेना ही समाधान नहीं है बल्कि अत:करण मे योग्यता बढ़ाना और उसमे विचारों का स्थिर होना ही जीवन का स्थिर होना है। जैसे जमीन में बाण मारने से पानी के स्रोत फूट पड़ते हैं इसी तरह विचारों के चित्त में स्थिर होते ही अमृत के स्रोत फूट पड़ते हैं।

इसीलिए चिंतन के अनुसार विचार ही चित्त में बीज बोने का काम करते है, विचार ही संरक्षण या सुरक्षा प्रदान करते हैं, विचार ही तत्वज्ञान हैं और विचार ही योग्यता या पात्रता बढ़ाते हैं। इसीलिए बुद्धि को ही संसार में सर्वश्रेष्ठ तत्व माना गया है जो कि विचार के जरिए ही कार्य करती है। इस बुद्धि में हजारों अणुबमों की शक्ति है, यह बुद्धि चलती फिरती फैक्टरी हैं जो कि निरंतर उत्पादन करती रहती है, यह बुद्धि चलता फिरता इन्टरनेट है जिसमें जों विषय आप कल्पना करो वही आपके सामने प्रस्तुत हो जाता है और यही बुद्धि कल्पवृक्ष भी है जिसमें जो आप चाहो उसे यथार्थ में परिवर्तित होते देख सकते हो।

हम जो भी विचार करें, बहुत सोच समझकर करें क्योंकि उनकी छाप, तुरन्त चित्त पर पड़ती है और वे देर सबर फलदायी होजाते हैं।

राजकुमार भगवतीप्रसाद गुप्त
मंत्री, आर्य समाज वाशी

महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में बोधोत्सव का आयोजन

आर्य जनों को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि प्रतिवर्ष की भांति आगामी वर्ष में महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में शिवरात्रि के पावन पर्व पर भव्य ऋषि बोधोत्सव का आयोजन रविवार, सोमवार, मंगलवार दिनांक ०६.०७.०८ मार्च २०१६ को किया जायेगा। आपसे निवेदन है कि आप यह तिथियॉ अभी से अंकित कर लेवें और इन तिथियों में अपनी आर्य समाज एवं अपनी संस्था का कोई कार्यक्रम न रखकर उक्त समारोह में अधिक से अधिक आर्य जनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। आपके आवास एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी।

रामनाथ सहगल
मन्त्री

प्राणायाम:

आचार्य- ब्रि. नन्दकिशोर

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेद: प्राणायाम:।।

योग० २।४९।।

(तरिस्मन् सति) जो वायु बाहर से भीतर को आता है, उसको श्वास और जो भीतर से बाहर जाता है, उसको प्रश्वास कहते हैं। उन दोनों के जाने आने को विचार से रोके। नासिका को हाथ से कभी न पकड़े किन्तु ज्ञान से ही उनके रोकने को प्राणायाम कहते हैं।

स तु बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृतिर्देशकालसंख्याभि: परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्म:।।४०।। योग० २।५०।।

और यह प्राणायाम चार प्रकार से होता है (स तु बाह्या०) अर्थात् एक बाह्य विषय, दूसरा आभ्यन्तर विषय तीसरा स्तम्भवृत्ति।

बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थ:।।४३।। योग० २।५१।।

और चौथा जो बाहर भीतर रोकने से होता है अर्थात् जो कि (बाह्याभ्य०) इस सूत्र का विषय है। वे चार प्राणायाम इस प्रकार के होते हैं कि जब भीतर से बाहर को श्वास निकले, तब उसको बाहर ही रोक दे, इसको प्रथम प्राणायाम कहते हैं। जब बाहर से श्वास भीतर को आवे, तब उसको जितना रोक सके, उतना भीतर ही रोक दे. इसको दूसरा प्राणायाम कहते हैं। तीसरा स्तम्भवृत्ति है कि न प्राण को बाहर निकाले और न बाहर से भीतर ले जाय किन्तु जितनी देर सुख से हो सके उसको जहाँ का तहाँ, ज्यों का त्यों एकदम रोक दे और चौथा यह है कि जब श्वास भीतर से बाहर को आवे, तब बाहर ही कुछ रोकता रहे और जब बाहर से भीतर आवे तब उसको भीतर ही थोड़ा रोकता रहे, इसको

सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में प्राणायाम का उल्लेख

योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्याते:।।

योग० २।२८।।

जब मनुष्य प्राणायाम करता है तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता जाता है। जब तक मुक्ति न हो तब तक उसके आत्मा का ज्ञान बराबर बढ़ता जाता है।

दह्यन्ते ध्यायमानानां धातूनां च यथा मला:।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषा: प्राणस्य निग्रहात्।।

मनुस्मृति ६।७१।

जैसे अग्नि में तपाने से सुवर्णादि धातुओं का मल नष्ट होकर शुद्ध होते हैं, वैसे प्राणायाम करके मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं।

प्राणायाम का विधि

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य। (योग० १।३४)

जैसे अत्यन्त वेग से वमन होकर अन्न बाहर निकल जाता है, वैसे प्राण को बल से बाहर फेंक के बाहर ही यथाशक्ति रोक देवे। जब बाहर निकलना चाहे, तब मूलेन्द्रिय को ऊपर खींच के, वायु को बाहर फेंक दे। जब तक मूलेन्द्रिय को ऊपर खींच रखे, तब तक प्राण बाहर रहता है। इसी प्रकार प्राण बाहर अधिक ठहर सकता है। जब घबराहट हो तब धीरे-धीरे भीतर वायु को लेके फिर भी वैसे ही करता जाय, जितना सामर्थ्य और इच्छा हो। और मन में 'ओ३म्' इसका जप करता जाय। इस प्रकार करने से आत्मा और मन की पवित्रता और स्थिरता होती है।

एक 'बाह्यविषय' अर्थात् बाहर ही प्राण को अधिक रोकना। दूसरा 'आभ्यन्तर' अर्थात् भीतर जितना रोका जाय. उतना रोके। तीसरा 'स्तम्भवृत्ति' अर्थात् एकदम जहाँ का तहाँ प्राण को यथाशक्ति रोक देना। 'बाह्याभ्यन्तराक्षेपी' अर्थात् जब प्राण भीतर से बाहर निकलने लगे, तब उससे विरुद्ध उसको न निकलने देने के लिये, बाहर से भीतर ले और जब बाहर से भीतर आने लगे, तब भीतर से बाहर की ओर प्राण को धक्का देकर, रोकता जाय। ऐसे एक-दूसरे के विरुद्ध क्रिया करे तो दोनों की गति रुककर प्राण अपने वश में होने से, मन और इन्द्रियां भी स्वाधीन होते हैं। बल पुरुषार्थ बढ़कर बुद्धि तीव्र सूक्ष्मरूप हो जाती है कि जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण कर लेती है। इससे मनुष्य शरीर में वीर्यवृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर बल पराक्रम, जितेन्द्रियता, सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझकर उपस्थित कर लेगा। स्त्री भी इसी प्रकार योगाभ्यास करे। भोजन-छादन, बैठने-उठने, बोलने-चालने बड़े-छोटे से यथायोग्य व्यवहार करने का उपदेश करें।

प्राणायाम, प्राणविद्या

१. स्त्री-पुरुषों को, 'प्राण को वश में रखने वाला मन है और मन को वश में करने वाला प्राण है' ऐसा जानकर, प्राणायाम से मन की शुद्धि करते हुए समस्त सृष्टि के पदार्थविज्ञान को ग्रहण करना चाहिए। दयानन्द वेदभाष्य स० १३-५५

२. जैसे धार्मिक न्यायाधीश प्रजाओं की रक्षा करता है, वैसे ही प्राणायाम आदि के द्वारा साधे हुए प्राण योगी को सब दु:खों से बचाते हैं। जैसे विदुषी माता विद्या और सुशिक्षा के द्वारा अपने सन्तानों को बढ़ाती है, वैसे अभ्यास की गई योगक्रियाएँ योगी को बढ़ाती हैं।

दयानन्द वेदभाष्य य० १९-९०

३. कोई भी व्यक्ति, स्तुतियों, धारणावती बुद्धियों और दु:खनिवारक ओषधियों को प्राप्त कराने वाले विद्वान के बिना और प्राणायाम के बिना विज्ञान, सांसारिक सुख तथा मोक्षसुख को प्राप्त नहीं कर सकता है।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० १-४३-४

४. जो मनुष्य शुद्ध बुद्धि से और योगाभ्यास से सर्वसुखदायी तथा सर्वजगत्-धारणकर्त्ता वायु को प्राणायाम के समय वश में कर लेते हैं, वे सब सुखों को प्राप्त कर लेते हैं।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० ६-४९-४

५. मनुष्यों को प्राणायाम आदि साधनों से समस्त पाप को हटाकर स्वयं सुख पाना चाहिये और अन्यों को प्राप्त कराना चाहिये।

दयानन्द वेदभाष्य य० ३९-१२

६. जैसे प्राणायाम आदि से साधे हुए वायु (=प्राण) समृद्धि को और

कुपथ्य से सेवित वायु दरिद्रता को उत्पन्न करते हैं, वैसे ही (सत्कारपूर्वक) सङ्गति किये गये विद्वान् राज्य की सम्पन्नता को और अपमानित विद्वान् राज्यनाश को उपस्थित करते हैं। सुशिक्षा और सत्कार के साथ रक्षा किये गये शूरवीर जैसे शत्रुओं का निवारण करते हैं, वैसे वर्त्ताव करके राजपुरुष प्रजाओं में उत्तम सुन्तानों को प्राप्त करावें।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० ७-५६-२०

७. जैसे योगाभ्यास के द्वारा प्राणविद्या को तथा वायु-विकारों को जानने वाले और पथ्य का सेवन करने वाले लोग आनन्दपूर्वक सम्पूर्ण आयु को भोगते हैं, वैसे ही अन्य मनुष्यों को भी उनसे उस विद्या को जानकर सम्पूर्ण आयु भोगनी चाहिये।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० १-३७-१५

८. जैसे हरिण निरन्तर घास को खाकर सुखी होते हैं, वैसे प्राणविद्या का ज्ञाता मनुष्य युक्ति से आहार-विहार करके यम के मार्ग मृत्यु को प्राप्त न करे। पूरी आयु को भोगकर शरीर को सुखपूर्वक त्यागे।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० १-३८-५

९. जो मनुष्य प्राणविद्या को जानकर उसका उपयोग करते हैं, वे बलवान् और प्रतिष्ठित होकर दु:खों और शत्रुओं को हटाकर उत्तम हाथी, घोड़े, मनुष्य, धन और बुद्धि से युक्त होते हुए सदा पुष्ट रहते हैं।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० १-६५-१३

१०. हे मनुष्यों ! जिस वायु से योगी अनेक प्रकार के विज्ञान को प्राप्त करते हैं, जिससे सारा संसार और सारे प्राणी जीते हैं, उसके अभ्यास से परमात्मा को जानकर तुम मुक्तिमार्ग से आनन्द प्राप्त करो।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० ६-४९-५

इन्द्रियनिग्रह की महिमा

१. जैसे अग्नि आकाश में विचरता है, वैसे विद्वान् जन सूक्ष्म एवम् आकार-रहित पदार्थों की विद्या में विचरते हैं। जैसे गौ के पीछे बछड़ा चलता है, वैसे विद्वानों के अनुकूल अविद्वान लोग चलें और इन्द्रियों को वश में रखें।

दयानन्द वेदभाष्य य० २१-१५

२. जैसे उत्तम सारथि घोड़ों को नियन्त्रित करके उन्हें रथ में जोतकर सुखपूर्वक गमन आदि कार्य सिद्ध करता है, वैसे जितेन्द्रिय जीव अपने समस्त प्रयोजनों को सिद्ध कर सकता है। जैसे कोई मनुष्य दुष्ट सारथि और दुष्ट घोड़ों वाले रथ में बैठकर दु:खी होता है, वैसे ही उच्छृङ्खल इन्द्रियों वाले शरीर में रहकर जीवात्मा दु:खी होता है।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० ६-४६-१९

३. जो मनुष्य ब्रह्मचर्य से जितेन्द्रिय होकर, द्वेष को त्यागकर और धर्मसाध्यम से उपदेश देकर तथा सुनकर प्रयत्नशील रहते हैं, वे ही धार्मिक विद्वान् सम्पूर्ण सत्य और असत्य को जानने तथा उसका उपदेश करने में समर्थ होते हैं, अन्य हठी तथा अभिमानी और नीच हृदय वाले मनुष्य नहीं।

दयानन्द वेदभाष्य य० १२-४३

४. सब बनुष्यों को परमेश्वर की उपासाना से और उसकी आज्ञा के पालन से अहिंसा धर्म को अपनाकर जितेन्द्रियता को सिद्ध करना चाहिये।

दयानन्द वेदभाष्य य० ३६-२

५. जैसे संयमी मनुष्य शुभ आचरण से शरीर और आत्मा को बलवान् बनाता है, वैसे 'संयम से सब पदार्थों को सब लोग बरतें।

दयानन्द वेदभाष्य ऋ० १-१८७-१०

विमर्श :

'प्राणायाम:'- प्राणस्य आयाम: (प्राण+आङ्+✓ यम् (नियन्त्रणार्थक) + घञ्) = प्राणायाम नामक चौथा योगाङ्ग है। आसन सिद्ध होने पर श्वास और प्रश्वास की गति को रोकना ही प्राणायाम कहलाता है।

सोमरस आत्मकलश में प्रवेश करता हैं।

उपोमति: पृच्यते सिच्यते मधुमन्द्राजनी चोदतेअन्तरासनि।
पवमान: सन्तनि: सुन्वतामिवमधुमान् द्रप्स:परिवार मर्षति।।

सामवेद १३७१

ये उपसीन मनवा डोले
हृदय स्वासीन रस घोले
छाना मन की, छन्नी से
आत्म-कलश में ये रीसे ।।

ये मधु सोम रस है
दिव्य रस है पावन
हुआ आत्म-कलशमें
इसका शुभ आगम
मिली शक्तियाँ भी
जागीं ज्योतियाँ भी
आनन्द जागा हौले हौले।।

ये उपासीन .....

हो गई संयुक्त मुझ से, चिन्तन मनन की शक्ति
अनुप्राणित हो गई, अनुपम ये अनुभूति
अंग अंग मधु सोम रस से पा रहा है दिव्यओज
जिव्हा आनन्दयी होके स्वरों को रही खोज
समा है सुहाना
उपहार मनमाना
आनन्द जागा हौले हौले हौले

ये उपासीन.....

कैसा हर्ष का विषय, प्रभु है मैं हूँ और विनय
ध्यान रूप कून्डी-सोटे से पीसने का रस-समय
ऐसा बँध गया है समय, मनवा मस्ती में रहा झूम
गीतों में प्रभु प्रणय है, हृदय में ज्योतियों की धूम
हे सोम! प्रभुआओ
सरस रस बहाओ
आनन्द जागा हौले हौले

(उपासीन) पास बैठा हुआ, (स्वासीन) सुखसे बैठा हुआ (आगम) आना (प्रणय) प्रेम

- ललित साहनी

चाणक्यनीतिदर्पण:

पठन्ति चतुरो वेदान् धर्मशास्त्राण्यनेकशः।
आत्मानं नैव जानन्ति दर्वी पाकरसं यथा ॥१२॥

शब्दार्थ- जो लोग **चतुर: वेदान्** ऋग्वेदादि चारों को तथा **अनेकश:** बहुत-से **धर्म-शास्त्राणि** धर्मशास्त्रों को **पठन्ति** पढ़ते हैं फिर भी **आत्मानम्** आत्मा और परमात्मा को **न एव जानन्ति** बिल्कुल नहीं जानते (आत्मज्ञान से शून्य हैं,) उनका जीवन ऐसा है **यथा** जैसे **दर्वी** कलछी **पाकरसम्** रसदार शाक में घूमकर भी उसके स्वाद को नहीं जानती।

भावार्थ- जो ऋग्वेदादि चारों वेद और अनेक शास्त्रों का गहन अध्ययन करके भी शास्त्रों के प्रतिपाद्य आत्मा और परमात्मा को नहीं जानते, आत्मज्ञान से शून्य हैं, उनका जीवन ठीक ऐसा ही है जैसे रस-दार शाक में घूमनेवाली कलछी को उसके स्वाद का ज्ञान नहीं होता।

विमर्श- सारे वेदमन्त्रों और सभी धर्मशास्त्रों का तात्पर्य परमात्मा में है। वेदादि शास्त्र आत्मा-परमात्मा के ज्ञान से भरे पड़े है। सभी शास्त्र पुकार-पुकार कर उस ब्रह्म को जानने का सन्देश दे रहे हैं। वेद ने तो यहाँ तक कह दिया-

यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति। - ऋ० १।१६४।३६

जो सर्वोत्पादक परमेश्वर को नहीं जानता, उसे वेदपाठ से भी क्या लाभ होगा?

धन्या द्विजमयी नौका विपरीता भवार्णवे।
तरन्त्यधोगताः सर्वे उपरिस्थाः पतन्त्यधः ॥१३॥

शब्दार्थ- यह **द्विजमयी** ब्राह्मणरूपी **नौका** नाव **धन्या** धन्य है जो **भव-श्रर्णवे** संसाररूपी सागर में **विपरीता** उलटी रीति से चलती है। उलटी रीति क्या है? **अधोगता:** इसके नीचे रहनेवाले **सर्वे** सब **तरन्ति** तर जाते हैं, भव-सागर से पार हो जाते हैं परन्तु **उपरिस्था:** ऊपर रहने वाले, ऊपर चढ़नेवाले **अध:** नीचे **पतन्ति** गिर जाते हैं।

भावार्थ- ब्राह्मणरूपी नौका धन्य है। संसाररूपी सागर में यह उलटी गति से चलती है। उलटी गति क्या है? जो इस नाव के नीचे रहते हैं, वे सब तो तर जाते हैं, भवसागर से पार उतर जाते हैं और जो इस नाव में ऊपर चढ़ते हैं, उनका पतन हो जाता है, वे नीचे गिर जाते हैं। तात्पर्य यह है कि जो ब्राह्मणों के साथ नम्रता का व्यवहार करते हैं, वे तर जाते हैं और जो नम्र नहीं रहते, अभिमान में चूर रहकर उनका अपमान करते हैं उनका पतन हो जाता है।

विमर्श- धर्मात्मा और नीतिज्ञ विदुर ने धृतराष्ट्र को विनाश की सूचना देनेवाले आठ लक्षणों का निर्देश किया था-

अष्टौ पूर्वनिमित्तानि नरस्य विनशिष्यतः।
ब्राह्मणान् प्रथमं द्वेष्टि ब्राह्मणैश्च विरूध्यते ॥
ब्राह्मणस्वानि चादत्ते ब्राह्मणांश्च जिघांसति।
रमते निन्दया चैषां प्रशंसां नाभिनन्दति॥
नैतान् स्मृति कृत्येषु याचितश्चाभ्यसूयति।
एतान् दोषान्तर: प्राज्ञो बुध्येद् बुद्ध्वा विसर्जयेत॥

- विदुर १।६८-१००

विनाश को प्राप्त होनेवाले पुरुष में निम्न आठ चिह्न पहले ही आ जाते हैं- १. वह ब्राह्मणों से द्वेष करने लगता है, २. ब्राह्मणों से विरोध करता है, ३. ब्राह्मणों के धन को छीनता है, ४. ब्राह्मणों को मारने (शारीरिक दण्ड देने या नष्ट करने) की इच्छा करता है, ५. ब्राह्मणों की निन्दा करने में सुख मानता है, ६. ब्राह्मणों की प्रशंसा से प्रसन्न नही होता, ७. उचित अवसरों (उत्सवादि) पर ब्राह्मणों का स्मरण नहीं करता (उनसे सम्मति नहीं लेता और न उन्हें निमन्त्रित करता है) और ८. ब्राह्मण कुछ माँगते हैं तो उन्हें हीनता से देखता है। बुद्धिमान् मनुष्य को इन दोषों को जानना चाहिए और जानकर इन्हें त्याग देना चाहिए।

अयममृतनिधानं नायकोऽप्यौषधीनां
अमृतमयशरीरः कान्तियुक्तोऽपि चन्द्रः।
भवति विगतश्मिर्मण्डलं प्राप्य मानो:
परसदननिविष्टः को लघुत्वं न याति ॥१४॥

शब्दार्थ- अयम् यह **चन्द्रः** चन्द्रमा अमृतनिधानम् अमृत का भण्डार है, ओषधीनाम् ओषधियों का **नायक:** अधिपति **अपि** भी है, **अमृतमय शरीर:** इसका शरीर अमृतमय है, **कान्तियुक्त:अपि** और कान्ति से युक्त भी है- ऐसा यह चन्द्रमा दिन में अथवा अमावास्या को मानो: सूर्य के **मण्डलम्** मण्डल को **प्राप्य** प्राप्त होकर **विगतरश्मि:** रश्मिहीन, निस्तेज **भवति** हो जाता है। ठीक ही है **पर-सदन-निविष्ट:** दूसरे के घर में जाकर क: कौन लघुत्वम् लघुता को, छोटेपन को न याति प्राप्त नहीं होती? (अर्थात् दूसरे के घर जाने पर सभी छोटे हो जाते हैं।)

भावार्थ- चन्द्रमा अमृत का भण्डार, औषधियों का अधिपति, अमृतमय शरीरवाला और कान्तियुक्त होने पर भी सूर्य के मण्डल में जाकर निस्तेज हो जाता है, उसकी सब चमक-दमक और शोभा लुप्त हो जाती है। ठीक ही है, दूसरे के घर में जाकर कौन लघुता को प्राप्त नहीं होता अर्थात् सभी होते हैं।

विमर्श- दूसरे के घर जाकर सबकी महिमा घट जाती है-

कौन बड़ाई जलधि मिली गंग नाम भौ धीम।
केहि की प्रभूता नहिं घटी पर-घर गये रहीम ॥

अलिरयं नलिनीदलमध्यग:
कमलिनीमकरन्दमदालसः।
विधिवशात्परदेशमुपागत:
कुटजपुष्परसं बहु मन्यते ॥१५॥

शब्दार्थ-अयम् यह अलि: भ्रमर, भौंरा जब **नलिनी-दल-मध्यग:** कमलिनी के पत्तों के मध्ये में था तब **कमलिनी-कमरन्द-मद-आलस:** कमलिनी के पराग के रस का पान कर उसके मद से अलसाया रहता था परन्तु अब **विधिवशात्** भाग्यवश **परदेशम्-उपागत**: परदेश में आकर **कुटज-पुष्प-रसम्** कुटज (करीर) के पुष्प के रस को ही **बहु** बहुत मन्यते मानता है, जिसमें न रस है और न गन्ध।

भावार्थ- भौंरा जब कमलिनी के पत्तों के मध्यम में था, तब कमलिनी के पराग के रस का पानकर उसके मद से अलसाया रहता था (मद-मस्त बना रहता था) परन्तु अब भाग्यवश परदेश में आकर कुटज (करीर, इन्द्रजी, कटसरैया, कुरैया) के पुष्प के रस को ही बहुत मानता है, जो रसहीना और गन्धशून्य है।

पीत: क्रुद्धेन तातश्चरणतलहतो वल्लभो येन रोषाद्
आबाल्याद्विप्रवर्येः स्ववदनविवरे धार्यते वैरिणी मे।
गेहं मे छेदयन्ति प्रतिदिवसमुमाकान्तपूजानिमित्तं
तस्मात्खिन्ना सदाहं द्विजकुलनिलयं नाथ युक्तं त्यजामि ।।१६।।

शब्दार्थ- लक्ष्मी विष्णु से कहती है- **येन** जिस (अगस्त्य ऋषि) **ने क्रुद्धेन** रूष्ट होकर **तात:** मेरे पिता समुद्र को **पीत:** पी डाला, विप्रवर भृगु ने रोषात् क्रोध से **वल्लभ:** मेरे प्राणप्रिय पति विष्णू को **चरण तलहत:** लात मारी, **विप्रवर्येः** श्रेष्ट ब्राह्मणों द्वारा **आबाल्यात्** बाल्यकाल से ही **स्व-वदन-विवरे** अपने मूखरूपी विवर (छिद्र) में **मे मेरी वैरिणी** सौत (सरस्वती) **धार्यते** धारण की जाती है और जो **प्रतिदिवसम्** प्रतिदिन **उमाकान्त-पूजा-निमित्तम्** पार्वती के पति शिव की पूजा के लिए मे मेरे गेहम् घर (कमल) को **छेदयन्ति** तोडते है, उजाड़ते हैं, **नाथ!** हे स्वामिन् **तस्मात्** इन कारणों से **खिन्ना** खिन्न होकर **अहम्** मैं **द्विजकुल-निलयम्** ब्राह्मणों के घर को सदा **सदा युक्तम्** ठीक ही **त्याजामि** छोड़े रहती हूँ।

भावार्थ- लक्ष्मी विष्णुजी से कहती हैं- अगस्त्य ऋषि ने क्रुद्ध होकर मेरे पिता समुद्र को पी डाला, विप्रवर भृगु ने रूष्ट होकर मेरे प्राणप्रिय पति के वक्षस्थल पर लात मारी, श्रेष्ठ ब्राह्मण बचपन से ही मेरी सौत सरस्वती को मुँह लगाये रहते हैं और प्रतिदिन उमापति शिव की पूजा के लिए मेरे घर (कमल-पूष्पों) को उजाड़ते रहती हूँ।

विमर्श- समुद्र का पीना, विष्णु को लात मारना आदि हैं तो ये सब गप्पें ही परन्तु विद्वानों के निर्धन होने का काव्यमय चित्रण अतीव मनोहारी है।

सारे ही विद्वान् निर्धन होते हैं, ऐसी बात भी नहीं है। अनेक व्यक्ति विद्वान् होने के साथ-साथ वैभवशाली भी हुए हुए हैं।

(चाणक्य नीति दर्पण से साभार)

आओ ! पूर्ण शुद्ध वैदिक हो जायें

हम यह गर्वपूर्वक कह सकते हैं, कि हमको कभी किसी दूसरे ने पराजित नहीं किया। पर शर्म से गर्दन नीची हो जाती है, जब देखते हैं कि हम सदैव अपने आपको पराजित करते रहे हैं और पराजित होते रहे हैं। हमारे सामने तीन ऐसे बड़े बड़े ऐतिहासिक प्रसङ्ग उपस्थित हैं जिनसे हमारी उपयुक्त बात सिद्ध होती है।

सबसे प्रथम सिकन्दर की चढ़ाई होती है। हम उसे हारते हैं? नहीं।पर क्या हम सिकन्दर के बल या रणकौशल से हारते है? नहीं। हम अपने ही बल और रणकौशल से हारते है। हमारे ही आदमी सिकन्दर की फौज में शामिल होते हैं और हमारा पराजय होता है। इतिहास में लिखा है कि तक्षशिला के मोफी ने ५००० योद्धाओं को साथ लेकर सिकन्दर को सहायता दी और पोरस को हराया। + अगर यह देशशत्रु सिकन्दर को मदद न देता,

that after all we have gone bak in the styles to the effects produced 2,000 years ago by the Hindus, We can produce brighter reds and execute finer patterns but the colours sre just the same although fixed differently. (The printing of cotton Fabribs by Antonio Sansone,)

+ Sir William Hunter says :- The Hindu king Mophis of Taxila joined Alexander with 5,000 men against Porus.
(Imperial Gazzetteer of India)

It may be remembered that is was with the help of the traitors, Sasigupta (Sasikottos) and others that Alexander obtained a footing in the Swat Valley and conquered the Usufzi Country.

Professor Moxeduncker says that when the Alexander attacked Porus, his army was twice as strong and had been yet further increasaed by 5,000 Indians from Mophis and some smaller states.
(History of Antiquity, vol. IV, p. 399)

तो सिकन्दर को आगे बढ़ने की हिम्मत न होती। क्योंकि मगध के राजा महानन्द की सेना की चढ़ाई से सिकन्दर घबरा गया था +। यहाँ हम खुद ही इस सिकन्दर की विजय के कारण साबित होते हैं।

हम पर दूसरा विजय मुसलमानों का है। मुसलमानों को बुलानेवाले, उनको मदद देनेवाले, उनकी नौकरी करनेवाले और उनसे रिश्तेदारी करनेवाले भी तो हम ही हैं। उनको हमने ही बुलाया और हमने ही उनकी आधीनता स्वीकार की। इसमें प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है।

योरपनिवासियों की विजय का तीसरा इतिहास हमारे सामने हैं। कालीकट के राजा ने उन्हें टिकाया। मुसलमान बादशाहों ने उनको व्यापार करने, जमीन खरीदने, फौज रखने और सिक्का चलाने का परवाना दिया। हमारे देशी सिपाहियों ने अँगरेजों की फौजों में नौकरी की और बेशर्मी से अपने आपको पराजित करते रहे।

इस प्रकार से इतिहास बलपूर्वक सिद्ध करता है कि हम पर कभी किसी ने बल से या रणकौशल से राज्य नहीं किया, प्रत्युत हमने स्वयं अपने आपको धोखा दिया है और अपने आपको पराजित किया है। इसका प्रबल प्रमाण यह है कि अपनी उक्त बेशर्म नीति के विरुद्ध हमने जब इच्छा की है, तब अपना शासन अपने हाथ में ले लिया है। राजा चन्द्रगुप्त ने सिकन्दर को हटाया, मरहटों और सिक्खों ने मुसलमानों को हटा दिया और यदि समस्त देश के हिन्दू एक मत होकर ईमानदारी से स्वराज्य का प्रयत्न करें, तो वे उसे प्राप्त कर सकते हैं। इसमें अधिक बहस करने की आवश्यकता नहीं है। कहने का मतलब यह कि हमारी सहायता के बिना हम पर कोई सुख से राज्य नहीं कर सकता।

हममें कभी ताकत कम नहीं रही, हममें ज्ञान की कमी कभी नहीं रही और हमें धन की भी कमी कभी नहीं रही१ अगर कोई कमी कभी हुई है, तो परस्पर मेल मिलाप की। हममें मतभेद बहुत शीघ्र ही हो जाता है। यह हमारे मिश्रित दर्शनज्ञान का ही दोष है। जहां दर्शन मिश्रित हो जाता है, वहाँ के दार्शनिकों में सदैव मतभेद बना रहता है। दर्शन भी सूक्ष्मतर ज्ञान की शाखा है। वह सदैव अस्थिर रहता है। इसलिए हम दार्शनिक मतभेद को छोड़कर जब तक पूर्ण शुद्ध वैदिक न हो जाएं तब तक हमारा मतभेद मिट नहीं सकता और जब तक मतभेद न मिटे तब तक हमारा कल्याण नहीं हो सकता।

संकलन कर्ता - **रमेशसिंह**

अमर शहीद

भगत सिंह

लाहौर उन दिनों ऐसे हठीले बालक की तरह था जो कभी इसको पीटता, कभी उसको मारता। आज अंग्रेज़ों का था, लेकिन उन्हें भगाने के लिए सारे हथियार इस्तेमाल किये जा रहे थे। सन् १९२८ अक्तूबर को सार्जेंट साण्डर्स ने निहत्थे लोगों पर लाठियाँ बरसाने का हुक्म दिया। पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय जी के सिर पर लाठियाँ पड़ीं। अठारह दिन कष्ट भोगकर वे शहीद हो गए। लेकिन पंद्रह दिसम्बर को जब साण्डर्स अपने कार्यालय से निकला तो राजगुरू ने ऐसा निशाना लगाया कि मौत का बदला मौत से लिया गया।

राजगुरु था भगतसिंह का दिलेर साथी। साथ ही थे देश के दुलारे चंद्रशेखर 'आज़ाद' और जयगोपाल। अंग्रेज़ सार्जेंट को उसके दफ्तर के ही पास जाकर गोली से भून देना बिल्कुल ऐसे था, जैसे शेर की माँद में जाकर उसे ललकारना। सारी अंग्रेज़ सरकार भड़क उठी। साण्डर्स को मारनेवालों का पीछा किया गया। बहादुर लड़के डी०ए०वी० कॉलेज के छात्रावास में जा छिपे। तब पुलिस ने सारा कॉलेज घेर लिया।

तो क्या बाग़ी लड़के पकड़ लिये गए?

चप्पा-चप्पा छान मारा पुलिस ने। दाढ़ी-मूँछवाले भगतसिंह को खोज निकालने के लिए पुलिस भाग-भागकर पसीने-पसीने हो गई। वहाँ कोई दाढ़ी-मूँछवाला होता तो पकड़ में आता ! भगतसिंह ने तो छात्रावास में घुसते ही जो पहला काम किया, वह था दाढ़ी-मूँछ का सफ़ाया। उसे और उसके साथियों को ज़िन्दा या मुर्दा पकड़ने के लिए बस-अड्डों और रेलवे-स्टेशनों पर गुप्तचरों के कड़े पहरे लग गए।

अंग्रेज़ अपने को बड़ा चतुर-चालाक समझते थे। लेकिन भारत के लाडले उनके भी बाप निकले।

रेलवे-स्टेशन पर एक-एक यात्री को पचास जोड़ा आँखें देख रही थीं। ये लोग थे खुफ़िया पुलिस के। एक साहब बहादुर आए अपनी मेम के साथ। अर्दली ने सामान उठा रखा था और पीछे-पीछे भागा आ रहा था। गाड़ी ने सीटी दी और स्टेशन से निकल गई।

खुफ़िया पुलिस के लोग अगली गाड़ी के पहरे पर जुट गए। उन्हें पता ही न लगा कि जिन्हें पकड़ने को उन्होंने इतना बड़ा जाल बिछाया था, वे तो उनकी आँखों में धूल झोंककर जा भी चुके थे। फ़ेल्ट हैटवाले साहब बहादुर कोई अंग्रेज़ न थे। वह तो सरदार भगतसिंह थे। उनकी मेम भी कोई औरत नहीं थी, बल्कि चन्द्रशेखर 'आज़ाद' थे। अर्दली भी कोई और नहीं स्वयं राजगुरु था जिसने साण्डर्स को गोली से चित किया था। उन्होंने यह साबित कर दिखाया कि जिस मुँह से भारतीयों पर अत्याचार का हुक्म दिया जाएगा, वह मुँह हमेशा के लिए बन्द कर दिया जाएगा।

भगतसिंह का जन्म गाँव 'बङ्गा' के ऐसे क्षत्रिय सरदारों के परिवार में हुआ, जो अंग्रेज़ों को भारत से चले जाने को पहले ही ललकार चुका था। पिता किशनसिंह जी उस समय जेल में थे, जब सन् १९०७ के सितम्बर महीने में भगतसिंह पैदा हुए। चाचा अजीतसिंह को अंग्रेज़ सरकार ने देश-निकाला दे रखा था।

संयोग से पिता और चाचा जेलों से छूटकर घर आ पहुँचे तो दादी ने बच्चे का नाम 'भागाँवाला' रखा। सचाई यह है कि वह अपने परिवार के लिए ही नहीं, समूचे देश के लिए 'भागाँवाला' यानि सौभाग्यशाली था। उसने जिस ढ़ग से अंग्रेज़ साम्राज्यशाही की जड़ों पर करारा प्रहार किया, वह शायद वही कर सकता था।

पिता और चाचा द्वारा देशभक्ति के संस्कार उसे पैदा होते ही विरासत में मिले। तभी तो वह बचपन में ही अपने गाँव के किसानों से पूछ बैठा, ''आप लोग क्या तलवार-बन्दूक़ की खेती नहीं कर सकते?''

लोग पूछते, ''क्यों?''

भगतसिंह कहता, ''अंग्रेज़ों को भगाने के लिए।''

प्राइमरी तक गाँव में पढ़ाई करके नौ साल की आयु में भगतसिंह को लाहौर भेजा गया, आगे की पढ़ाई के लिए। पिता ने डी.ए. वी. स्कूल में भर्ती कराया, ताकि ऐसी जगह पढ़ाई हो जहाँ से गुलामी की ज़ंजीर तोड़ने की शिक्षा मिले। बाद में वहाँ से भी पिता ने हटाकर 'नैशनल कॉलेज' में भर्ती कराया, क्योंकि वह अपने पुत्र को ऐसे किसी स्कूल में नहीं पढ़ाना चाहते थे जिसे अंग्रेज़ सरकार की सहायता मिलती हो।

'नैशनल कॉलेज' को लाला लाजपतराय और भाई परमानंद जी चला रहे थे। ऐसे देशभक्तों की छत्रछाया में भगतसिंह को जो शिक्षा मिली, वह सचमुच सोने पर सुहागा सिद्ध हुई। यहीं उसे ऐसे साथी मिले जिन्होंने आगे चलकर बमों के धमाकों से अंग्रेज़-सरकार की नींद हराम कर दी।

अब भगतसिंह को रात-दिन एक ही रट लग गई कि 'देश को स्वतंत्र किये बिना जीना हराम है।' सन् १९२२ में एफ० ए० परीक्षा पास कर ली। अब अगर वह नाटक में शामिल होता तो देश-भक्ति के गीत गाता; भाषण देता तो सोई रूहें जाग उठतीं। बात-बात में ऐसा रंग घोलता कि बाहें फड़क उठतीं, मन मचल उठता अंग्रेजों से लोहा लेने के लिए।

पढ़ाई अभी चल ही रही थी माँ-बाप ने उसकी शादी के लिए लड़की भी चुन ली। भगतसिंह को पता चला तो परेशान हो उठा। उसके सामने एक मिशन था, एक मंज़िल थी-देश की आज़ादी। शादी होने पर तो वह नमक-आटा-दाल के ही चक्कर में फँस जाता। उसने शादी से इन्कार का पत्र लिखा और चुपचाप दिल्ली आ पहुँचा। 'अर्जुन' अखबार के लिए कुछ समय वह संवाददाता का काम करता रहा। लेकिन रोटी कमाना ही तो उसका उद्देश्य न था। इसलिए सन् १९२४ में कानपुर जाकर 'प्रताप' अखबार के लिए काम शुरू कर दिया।

'प्रताप' का सम्पादन उन दोनों प्रसिद्ध देशभक्त गणेशशंकर 'विद्यार्थी' कर रहे थे। उनकी संगति में भगतसिंह और भी निखर उठा। वहीं उसकी भेंट बटुकेश्वरदत्त और चन्द्रशेखर 'आज़ाद' से हुई। 'विद्यार्थी' जी ने भगतसिंह की कर्मठता देखकर उसे एक 'राष्ट्रीय विद्यालय' का मुख्याध्यापक बना दिया। इस काम को भगतसिंह ने ऐसी कुशलता से

निभाया कि सारा शहर मुग्ध रह गया।

संयोग ऐसा बना कि उन दिनों बङ्गा में उसकी माता सख्त बीमार हो गई। भगतसिंह घर से बाहर रहकर मेहनत और तपस्या का जो अभ्यास पड़ गया था, वह अब काम आया। माँ की दिन-रात ऐसी सेवा की कि जिसके बचने की भी आशा नहीं थी, वह पूरी तरह स्वस्थ हो गई।

घर की चिन्ता से पिपटकर भगतसिंह ने 'नौजवान भारत सभा' की नींव रखी। पंजाब-भर में इस सभा की शाखाएँ फैल गईं। नौजवानों की टोलियाँ देश की आज़ादी के लिए कमर कसने लगी। एक दिन सबको बुलाकर सभा की गई। पहले भगतसिंह ने हाथ चीरकर लहू से प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर किये। इस कड़ी परीक्षा में केवल पाँच ही साथी डटे रहे, शेष डर के मारे खिसक गए।

अब 'सभा' के हरेक नौजवान ने हर शाखा में जाकर ऐसे ही दिलेर साथियों की टोलियाँ बनाईं। बीस-पच्चीस की टोलियों में ये लोग गाँव-गाँव जाकर लोगों को स्वाधीनता के लिए प्रेरित करने लगे। भगतसिंह तब से अंग्रेज़ों की आँखों का काँटा बन गया। वह अब दिन में कहीं होता और रात में कहीं। अमृतसर में जब वह 'अकाली' पत्र का सम्पादन कर रहा था, तो पुलिस ने एक दिन क़ैद कर लिया। लेकिन जो मौत से भी न डरता हो, उसे क़ैद का क्या डर! छह हज़ार की ज़मानत माँगी गई। ज़मानत की क्या कमी थी! भगतसिंह को रिहा करना पड़ा।

सन् १९२७ में उसने लाहौर को अपनी गतिविधि का केंद्र बनाया। उसे पता लगा कि 'नौजवान भारत सभा' में कई सरकारी जासूस घुस आए हैं। इसके लिए उसने सबको बुलाकर कहा कि 'सभा' का वही सदस्य माना जाएगा जो परीक्षा में खरा उतरे। परीक्षा के लिए एक-साथ छह मोमबत्तियाँ जलाई गईं। भगतसिंह ने सबसे पहले अपना हाथ उनपर रखा। बीस मिनट में हाथ की त्वचा जल गई, चर्बी और लहू जल गया, मगर उसने हाथ न हटाया।

इसे देखकर ही सरकारी जासूस और डरपोक साथी खिसक गए। इस स्थिति से भी भगतसिंह घबराया नहीं। सन् १९२८ के सितम्बर में दिल्ली के पुराने किले में देश-भर के क्रान्तिकारियों को बुलाया गया, ताकि ठोस प्रोग्राम बनाकर अंग्रेज़ों को देश से खदेड़ा जा सके। नेता चुने गए चन्द्रशेखर 'आज़ाद'। भगतसिंह ने प्रस्ताव रखा और नए संगठन का नाम रखा गया 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी'। हथियार और धन इकट्ठा किया जाने लगा।

तब आया 'साइमन कमीशन'। उसी के बहिष्कार में लाला लाजपतराय को शहीद होना पड़ा। अपने शिक्षा-गुरु और देशभक्त की मृत्यु का बदला लेकर भगतसिंह अपने साथियों के साथ लाहौर से सुरक्षित निकल भागा। तब बिहार और बङ्गाल तक की यात्रा करके बम बनाना सीखा। झाँसी में बम चलाकर परखे गए। तब कानपुर में बम-फैक्ट्री शुरू कर दी। दिन में वहाँ जूते बनते और रात को बम तैयार होते।

अब भगतसिंह के जीवन का सबसे कठिन परीक्षा-काल आ पहुँचा। बम्बई में मज़दूर हड़ताल करना चाहते थे, ताकि भरपेट खाना नसीब हो। सरकार ने 'पब्लिक सेफ़्टी बिल' रखना चाहा ताकि भारतीय भूखे-नंगे ही रहें और बिल की शक्ति से हड़ताल करनेवालों पर डण्डे बरसाए जा सकें।

बिल असेम्बली में बहुँचा तो अध्यक्ष वी.जे. पटेल ने पास न होने दिया। सरदार पटेल के वे बड़े भाई थे। वोट तो बराबर के पड़े, मगर अध्यक्ष ने अपने विशेष वोट से बिल ठुकरा दिया। सरकार ने दोबारा बिल पेश किया और कुछ चापलूस भारतीयों को अपने साथ मिला लिया।

आठ अप्रैल सन् १९२९ के दिन बिल पेश हुआ।

सरदार भगतसिंह और बटुकेश्वरदत्त भी बम लेकर गैलरी में जा बैठे। वे सरकार को खुले तौर पर यह बता देना चाहते थे कि ऐसा बिल भारतवासी कभी स्वीकार नहीं करेंगे जो हमें भूखा-नंगा रहने पर मजबूर करे। खाली जगह पर बम फेंका गया। भगतसिंह ने दो खाली गोलियाँ भी दाग़ दीं। लाल-लाल पर्चे फेंके गए जिनमें बिल के विरुद्ध नारे लिखे गए थे।

दोनों पकड़ लिये गए, बल्कि दोनों ने स्वयं को जान-बूझकर पकड़वाया। छोटी अदालत में बयान देना भी उन्हें मंज़ूर न था। तब सैशनकोर्ट ले-जाए गए। वहाँ उन्होंने स्पष्ट कहा, ''अंग्रेज़ सरकार को हम खुले तौर पर यह बता देना चाहते हैं कि भारतवासी किसी भी तरह का अत्याचार सहने को तैयार नहीं हैं।''

उन्होंने बम फेंककर विरोध प्रकट किया था, सरकार को चेताया-भर था, मारा किसी को नहीं था। लेकिन पराई सरकार को तो आज़ादी की हर आवाज़ को दबाना था। दोनों को 'काला पानी' की सज़ा सुनाई गई। दोनों ने कहा कि ''हमें यही दण्ड मिलना चाहिए, ताकि हमारे देश के लोग हमारी मौत का इशारा समझें। ऐसी मौत हमने इसलिए चुनी है कि हम अपने देश को अपना समझते हैं और अपने देश की आज़ादी चाहते हैं।''

ऐसे करारे बयान सुनकर अंग्रेज़ सरकार दहल उठी। भगतसिंह को 'मियाँवाली जेल' भेजा गया, बटुकेश्वरदत्त को लाहौर सेंट्रल जेल में। लोगों में भयानक रोष जाग उठा। अंग्रेज़ सरकार ने शान्त करने के बजाय दमन से काम लिया। कई नए-पुराने दोष लगाकर भगतसिंह पर नए मुक़द्दमे चलाए गए। डेढ़ वर्ष तक यह नाटक खेला गया।

जेलों में बन्दियों के साथ दुर्व्यवहार देखकर भगतसिंह आठ-आठ आँसू रोया। उसने तब तक खाना खाने से इन्कार कर दिया जब तक बन्दियों के रहने-खाने का ठीक-ठीक प्रबन्ध न हो। उसके साथियों ने भूख-हड़ताल शुरू कर दी। यतीन्द्रनाथदास दो महीने बाद ही भूख से प्राण त्याग गए। कलकत्ता तक उनका शव हर स्टेशन पर रोका गया, उस पर फूल चढ़ाए गए, आँसू बहाए गए। मगर अंग्रेज़ सरकार न पसीजी। भगतसिंह ने एक सौ पन्द्रह दिन तक भूख-हड़ताल की। ईश्वर ने उसकी आत्मा में जाने कैसी शक्ति भर दी थी कि मौत भी उसके साहस के आगे हार गई। भगतसिंह ने तभी अनशन तोड़ा जब सरकार ने हार मान ली और जेलों में सुधार किया गया।

इस बीच लाहौर में किसी देशद्रोही ने क्रान्तिकारियों के अड्डे की सूचना दे दी। बम बनाने को सामान भी पुलिस के हाथ लगा और कई क्रान्तिकारी भी पकड़े गए। अठारह नौजवानों को भगतसिंह के साथ सरकार ने फाँसी चढ़ाने का फ़ैसला किया। कई अपीलें की गईं। भगतसिंह ने बयान न बदला। वह अपने उत्सर्ग से देशवासियों को जगाना चाहता था, मजबूर करना चाहता था कि आज़ादी के लिए मौत भी मिले तो अपने को धन्य जानो!

सरकार ने सोचा, अगर उनकी लाश जनता के हाथ पड़ गई तो लोगों

के क्रोध को सँभालना मुश्किल हो जाएगा। इसलिए एक दिन पहले ही फाँसी दे दी। जेल का यह नियम भी बदल दिया कि फाँसी प्रात:काल देनी चाहिये। एक दिन पहले शाम को ही फाँसी पर लटका दिया। तीन थे वे साथी, तीन देश के दुलारे- भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव। फाँसी के समय भी उन्होंने हँस-हँसकर राष्ट्र-गीत गाया और हँसते-हँसते 'स्वाधीन भारत की जय' के नारे लगाकर उन्होंने फन्दे स्वयं गले में डाले।

अंग्रेज़ सरकार यहाँ तक डर गई कि जेल की पिछली दीवार फोड़कर शव एक मोटर में लादे गए और फ़िरोजपुर में सतलुज दरिया के किनारे पहुँचाए गए। जेल के बाहर हज़ारों लोग एक दिन पहले जो आ बैठे थे- अपने लाडलों के शव लेने! अगर उनको शव मिल जाते और जुलूस निकलता, तो स्वाभाविक था कि लोगों का क्रोध इतना भड़क उठता कि अंग्रेज़ों को लोगों को मुँह दिखाना मुश्किल पड़ जाता।

कुछ लोगों को यह सूचना भी मिल गई। राज्य भले ही अंग्रेज़ों का था, लेकिन जेल के रक्षक-सिपाही तो भारत के ही थे! अन्दर-ही -अन्दर उनकी हमदर्दी तो देशवासियों के साथ ही थी! लाहौर से एक सिपाही संयोगवश लायलपुर पहुँचा। उसने अपने एक पुराने सिपाही साथी को चुपके से यह सब बता दिया। वह अपने नगर का लोकप्रिय कौमी शायर था- पण्डित कृपाराम 'लाग़िर'। उसने अठारह साल पुलिस की नौकरी लात मार दी थी और स्वाधीनता के लिए वह रात-दिन जगह-जगह जलसे-जुलूसों में अपनी चुटकुला-शायरी से लोगों को अंग्रेज़ों के विरुद्ध भड़काया करता था।

तत्काल यह सूचना लाहौर जेल के आगे बैठे उन रिश्तेदारों तक पहुँचाई गई, जिनके लाडलों के शव चुपचाप सतलुज-किनारे पहुँचा दिये गए थे। समय किराए की मोटर में कुछ लोग रातोंरात सतलुज-किनारे पहुँचे। लेकिन वहाँ अब क्या रखा था!

कुछ लोग कहते है, शवों को अंग्रेज़ - सरकार ने अग्नि-भेंट किया था। पुलिस-सूत्रों के अनुसार यह भी पता लगा कि जल्दबाज़ी से काम लेकर अंग्रेज़ अधिकारियों ने उन्हें जलाना भी उचित नहीं जाना, बल्कि टुकड़े करवा दे दरिया में फेंका गया, ताकि मछलियाँ उन्हें निगल जायें, और शवों का निशान तक न बचे। लेकिन शव को इससे क्या अन्तर पड़ता है कि उसे कोई जलाता है या काटता है!

सारे भारत में विरोध-प्रदर्शन हुए। लोगों के उद्गार क्या रहे, एक-एक का वर्णन करना कठिन है। स्वर्गीय पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने उस समय जो कहा था, वह बड़ा मार्मिक था। उन्होंने आँसू-भरी आँखों और रूँधे हुए गले से कहा था:

''जब हम अंग्रेज़ के साथ सन्धि-वार्ता करेंगे तो हमारे और उनके बीच सरदार भगतसिंह की लाश पड़ी होगी कि हम उसे भूल न जायँ... भूल न जायँ...!''

सतलुज-किनारे सरदार भगतसिंह की समाधि पर अब हर बरस श्रद्धांजलि देनेवालों के मेले जुड़ते हैं।

शिक्षा- अत्याचार के आगे सिर झुकाना
कायरता ही नहीं, महापाप है !

(देश के दुलारे से साभार)

Management of

RESPIRATORY PROBLEMS

COUGH, COLD, SINUSITIS, TONSELITIES, BRONCHITIS, ASTHAMA

A Drugless Treatment With Yoga Asanas, Pranayama, Nasal Cleaning, Stomach Cleaning, Steam Inthaling, Sun Gazing, Acupressure, Diet Control, Naturopathy, Mind Control, Relaxation, Suksma Yayama

DATE	:	Mon 07.09.2015
TIME	:	7.30 AM TO 8.30 AM SUN : HOLIDAY
FEES	:	Rs. 2000/-
VENUE	:	ARYA SAMAJ MANDIR LINKING RD, SANTACRUZ (West).
COURSE	:	Yogashiromani RAGHAVA SOMESHWAR
DIRECTOR	:	WITH 34 YEARS EXPERIENCE. He has conducted more than 600 Health Management Workshops With Positive Results in many countries.
FNQUIRY	:	9869267131/9619729682/26602800

FEED BACK FROM STUDENTS OF EARLIER WORKSHOP

ANIL BHARWANI (BUSINESS) : I have been suffering from cold for a very long time. Being a marathon runner it was affecting my performance.

Within Two weeks of joining the workshop, I can see very drastic change in contorting and improving my respiratory problems.

ALEFIYAH HAKIMUDDIM (STUDENT) : I have been suffering from sinus for a very long period of time with the help of this course my problem has reduced to a great deal. The nasal blockage is cleared.

SHARMI VAKIL (ARCHITECT) : I have been suffering from sinus, migrane, headache since more than 20 years. I uses high dose of Allopathic Medicine which has given temporary relief. Thus workshop helped me a lot. Practicing, Jalaneti and breathing exercise has helped to clear sinus blockage. Meditation has helped to reduce my migrane. Yoga has helped me to be patient and control my anger.

वैदिक सहित्य मणिमाला

सकलनकर्ता-आचार्य धर्मदेव शास्त्री

* यदि हम सौभाग्य चाहते हैं तो हमें भगवान् के नियमों में रहकर चलना होगा। प्रभु के गुणों को जीवन में धारण कर लेना ही प्रभु के नियमों पर चलना है। ''आचार्य प्रियव्रतजी वेदवाचस्पति.
* ऐश्वर्य, धर्म, यश, शोभा, ज्ञान, वैराग्य इन को 'भग' कहते हैं। जिस जीवन में ये छः गुण मूर्तिमान होंगे वह सौ भाग्य का जीवन कहलाएगा। यह सौ भाग्य का जीवन प्रभु के नियमों में रहकर चलने से प्राप्त होता है प्रभु के नियमों में रह कर, चलने के लिये उत्तम विचारों की आवश्यकता है। बिना उत्कृष्ट विचारों के मनुष्य से कठोर नियम पालन का जीवन व्यतीत नहीं हो सकता। अपने विचारों को उत्कृष्ट मनाने के लिये हमें प्रभु की स्तुति करनी चाहिये। उसकी स्तुति उपासना के द्वारा हमारे अन्दर उस प्रभु के सत्य, न्याय, दया आदि गुण आ जाते है जिससे हम प्रभु के नियमों में रहकर चलने के योग्य बन जाते हैं। आ. प्रियव्रत जी
* आत्म स्य करने वाले लोग कभी परमात्मा के प्यारे नहीं हो सकते। भूल, गलत) अनुचितता, अपराध और पाप का ठीक नियमानुसार हमें दण्ड मिलता रहता है। बैचेनी, रोग, व्यथा वेदना, क्लेश, मृत्यु आदि द्वारा हमें शिक्षा मिलती रहती है कि हम परमात्मा की आज्ञाओं का उल्लंघन न करें।

''आचार्य अभयदेवजी विद्यालंकार''

* ज्ञान विहीन कर्म और कर्म विहीन ज्ञान दोनों ही कल्याण नहीं कर सकते ज्ञान और कर्म दोनों का समन्वय ही हमारा कल्याण कर सकता है।
* यदि विश्व के रचयिता प्रभु की रक्षा का हाथ हमारे सिर पर न हो तो हम इस विराट विश्व में एक क्षण केलिये भी जीवित नहीं रह सकते + हम मे जो कुछ अल्प सी शक्ति है वह अनन्त शक्ति के भण्डार प्रभु की कृपा का फल है।
* सचमुच हर एक बाह्य यज्ञ अन्दर के यज्ञ के लिये हैं। बाहर के द्रव्य भय यज्ञ की अपेक्षा अन्दर का मानसिक यज्ञ हजार गुणा श्रेष्ठ होता है। अत: मनुष्य को चाहिये कि मन द्वारा आत्मा को प्रदीप्त करे और इस प्रकार सद्‌बुद्धि को प्राप्त कर ले तथा सत्कर्म में प्रेरित होता हुआ आत्म कल्याण को पा जाए ''आचार्य अभयदेव विद्‌यालंकार''
* हमें सदा यह स्मरण रखना चाहिये कि हमारे जीवन का लक्ष्य ब्रह्म साक्षात्कार करना है। संसार के विषय हमारा लक्ष्य नहीं है। साधन है साध्य नहीं, साध्य तो ब्रह्म साक्षात्कार है।
* मनीषी वह पुरुष होता है जो अपने मन का ईश (स्वामी) है, जो कर्म क्षण भर के लिये भी मन का गुलाम नहीं होता।
* जो व्यक्ति अपना वास्तविक कल्याण चाहता है उसे केवल प्राकृतिक जगत् के विषयों में लिए न रहकर उस परमाश्रय भगवान् का सहारा लेना चाहिये।
* आदर्श प्रभु भक्त का चरित्र वैसा ही होगा जैसा कि एक आदर्श वेदज्ञ का होना चाहिये और आदर्श वेदज्ञ का चरित्र वैसा ही होगा जैसा कि आदर्श प्रभु भक्त का होना चाहिये।
* अपने को पवित्र और शक्ति शाली बनाकर ही हम दु:खों से बच सकते हैं।
* उपासक को चाहिये कि वह भगवान से प्राप्त किये हुए वेदज्ञान को संसार के लोगों तक पहुँचाने में अपना सारा ज्ञान और सारी कर्म शक्ति लगा दे। ''आचार्य प्रिय व्रत जी।''
* जिसका जीवन यज्ञमय हो जाता है उसी को भगवान के दर्शन होते हैं। जो प्राणों, मन और इन्द्रियों को वश में कर लेता है उसी को भगवान के दुर्शन होते हैं। जिस व्यक्ति का जीवन श्रद्धामय (सत्यात्मक) हो जाता है उसी को भगवान के दर्शन होते हैं। जिसे भगवान के दर्शन हो जाते हैं उसका जीवन पूर्ण रसीला हो जाता है उसके सब ताप मिट जाते हैं। भगवान तो सभी मनुष्यों के हृदय में निवास करते हैं उन्हें देखने के लिये अन्तर्वृत्ति (अन्तर्मुखी) होने की देर है।

''आचार्य प्रियव्रतजी''

* सब पुरुषार्थ यही है कि परमात्मा, उसकी आज्ञा और उसके रचे जगत का यथार्थ से निश्चय (ज्ञान) करना उससे ही धर्म अर्थ काम और मोक्ष इन चार प्रकार के पुरुषार्थ के फलों की सिद्धि होती है, अन्यथा नहीं। इस हेतु से तन-मन धन और आत्मा उनसे प्रयत्न पूर्वक ईश्वर के सहाय से सब मनुष्यों को धर्मादि पदार्थों की यथावत सिद्धि अवश्य करनी चाहिये।

''आर्याभिविनय'' महर्षि दयानन्द

* पाप का पूर्ण दलन ही प्रभु पूजा की प्रस्तावना है। अन्त: कारण की पवित्रता परब्रह्म की प्रप्ति का साधन है। ''स्वामी नित्यानन्द''
* सुखोपभोग के सब साधन उपलब्ध होने पर भी व्यसनों से दूर रहने ही आत्मा शक्ति शाली और परमेश्वर के तेज को ग्रहण करने के योग्य बनता है। ''स्वामी नित्यानंद''
* महर्षि दयानन्द ने (अपने योग विषयक) पत्र में) योग दर्शन विभूति पाद की सिद्धियों के विषय में वर्णन किया तो मेंडम ब्लैवेटसकी और कर्नल अल्कार ने महर्षि को लिखा कि वे संसार को चमत्कार दिखानें का प्रयत्न क्यों नही करते? तब महर्षि ने उन्हें लिखा कि ''करने को मैं सब कुछ कर सकता हूँ परन्तु 'मैं तो अपना जीवन वेदभाष्य और वैदिक धर्म के प्रचार मे लगाना चाहता हूँ। यदि चमत्कार दिखाना शुरू कर दूं तो फिर इस कार्य को कौन करेगा? यदि आप चाहते हैं तो मैं आपको सिद्धियां प्राप्त करने का मर्म बता सकता हूँ आप स्वयं इस मार्ग पर चलकर देखिये, स्वयं इन सिद्धियों! को प्राप्त करके लोगों को चमत्कार दिखाइयें''

''महर्षि दयानन्द के पत्र व विज्ञापन''

* भगवान का मन्त्र, उनका विचार, उनका उपदेश और सलाह सदा हमारे सभी रहते हैं। हम जिस क्षण चाहें उसी क्षण भगवान की शरण में जाकर उनसे मन्त्र प्राप्त कर सकते हैं। भगवान हमसबके घट-घट में व्यापक हैं। असे प्रभु से हम जब चाहें तभी हमें सत् परामर्श सद् विचार सदुपदेश भली सलाह प्राप्त हो सकती है। भगवान को अपने आपको अर्पण कर देनेवाले पवित्र हृदयों में भगवान की ओर से सदा प्रकाश मिलता रहता है। ''आचार्य प्रियव्रतजी''

श्रावण २०७१ (२०१५)
Post Date : 25-08-2015
MH/MR/N/136/MBI/-13-15
MAHRIL 06007/31/12/2015-TC
पोष्ट आफिस : सांताक्रुज (प.)

आर्य समाज सान्ताक्रुज मुम्बई का मुखपत्र

संपादक : संगीत आर्य

मुद्रक एवं प्रकाशक : चन्द्रपाल गुप्त द्वारा कृष्ण प्रिंटिंग प्रेस, २६, मंगलदास रोड, मुंबई-२. से मुद्रित कराकर आर्य समाज भवन, वी. पी. रोड, (लिंकिंग रोड़), सान्ताक्रुज़ (प.) मुंबई-४०० ०५४. से प्रकाशित किया। दूरभाष : २६६० २८००/२६६०२०७५

प्रति,

टिकट

* यह (आर्यभिविनय) ग्रन्थ जहां ईश्वर भक्त के भावों से भरा पड़ा है वहां देश भक्ति के भावों की भी इसमें कभी नहीं है। स्थान स्थान पर स्वराज्य की और चक्रवर्ती राज्य की प्रार्थना है। ऋषिवर को जिस ओर से देणे उनका महत्व चरमसीमा को पहुँचा हुआ पाते हैं। ईश्वर भक्ति में वे सबसे बढ़े हुए हैं।, संसार भर के देश भक्तो के वे शिरोमणि हैं।

''(आचार्य) वाचस्पति''एमर

* सबलोगों के हित और यथार्थ परमेश्वर को ज्ञान तथा प्रेम भक्ति यथावत हो, इसलिये इस (आर्य भिविनय) ग्रन्थ को आरम्भ किया है।

''महर्षि दयानन्द''

* यह (आर्या भिविनय) ग्रन्थ में परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना उपासना तथा धर्मादि विषय वर्णन किया है परन्तु मूल संहिता मन्त्र और ब्राह्मण प्रभा से ही सबका सबका बढ़ाने वाला यह विषय है।'' महर्षि दयानन्द ईश्वर आनन्द का भागी है और वही सबसे सदैव अधिक सुखी है ''महर्षि दयानन्द''

* जो नर इस संसार में अत्यन्त प्रेम, धर्मात्मा, विद्या सत्संग, सुविचारता, निर्वैरता, जितेन्द्रियता प्रत्यक्षादि प्रमाणों से परमात्मा का स्वीकार (आश्रय) करता है वही जन अतीव भाग्यशाली है क्योंकि वह मनुष्य यथार्थ सत्यविद्या से सम्पूर्ण दु:ख से छूट के परमानन्द परमात्मा का नित्यसंग रुप जा मोक्ष है। उसको प्राप्त होता है।'' महर्षि दयानन्द''

* जो विषय लम्पट विचार रहित, विद्या-धर्म जितेन्द्रियता सत्संग रहित, छल कपट अभिमान-दुराग्रहादि दुष्टता युक्त है सो वह मोक्ष सुख को प्राप्त नहीं होता क्यों कि वह ईश्वर भक्ति से विमुख है और वह मनुष्य जन्म मरण ज्वरादिपीड़ाओं से पीड़ित होके सदा दु:ख सागर में ही पड़ा रहता हैं। ''महर्षि दयानन्द''

* सब मनुष्यों को उचित है कि परमेश्वर और उसकी आज्ञा के विरुद्ध कभी नहीं हो किन्तु ईश्वर तथा उसकी आज्ञा में तत्पर हो के इसलोक (संसार व्यवहार) और परलोक (मोक्ष) इनकी यथावत सिद्धि यथावत करें यहीव सब मनुष्यों की कृत कृत्यता है। ''महर्षि दयानन्द''

* इस (आर्याभिविनय) ग्रन्थ से तो केवल मनुष्यों को ईश्वर का स्वरूपज्ञान और भक्ति, धर्मनिष्ठा, व्यवहार शुद्धि इत्यादि प्रयोजन सिद्ध होंगे, जिससे नास्तिक और पाखण्ड मतादि अधर्म में मनुष्यलोग ने फँसे, किन्च सब प्रकार के मनुष्य अत्युत्तम हो और सर्व शक्तिमान जगदीश्वर की कृपा सब मनुष्यों पर हो, जिससे सब मनुष्य दुष्टता को छोड के श्रेष्ठता को स्वीकार करें यही मेरी परमात्मा से प्रार्थना है सो परमेश्वर अवश्य पूरी करेगा। ''महर्षि दयानन्द''

राष्ट्रभाषा स्वाभिमान न्यास का आह्वान !

क्या

राष्ट्रध्वज, संविधान, राष्ट्रगान जैसे राष्ट्रीय गौरव के प्रति आपके हृदय में स्वाभिमान जनक सम्मान है? यदि हाँ, तो फिर राष्ट्रभाषा के लिए क्यों नहीं?

क्या आप राष्ट्रभाषा के समर्थन में केवल एक रुपया प्रतिमाह भी खर्च नहीं कर सकते?

-हर महीने ५० पैसे के दो पोस्टकार्ड हिन्दी को राष्ट्रभाषा का संवैधानिक गौरव दिलाने हेतु-

१. राष्ट्रपति महोदय को लिखें कि वे जब भी राष्ट्र को संबोधित करें तो केवल हिंदी में करें। आगामी स्वतंत्रता दिवस (१५ अगस्त २०१६) की पूर्व संध्या पर आप राष्ट्र को संबोधित करें तो कृपया हिन्दी में ही करें। क्योंकि यह स्वाधीन भारत के स्वाभिमान का प्रश्न है।

२. प्रधानमंत्री को आपने 'मन की बात' बताते हुए कहें कि वे अपने मंत्रियों व प्राासनिक अधिकारियों को हिंदी में संवाद करने के निर्देश दें तथा हिंदी को अविलंम्ब भारत देश की राष्ट्रभाषा बनाने की सकारात्मक पहल करें।

-उमाशंकर मिश्र
अध्यक्ष, राष्ट्रभाषा स्वाभिमान न्यास

विश्वविख्यात् झीलों की नगरी उदयपुर, जहाँ देश-विदेश से आने वाले पर्यटकों का ताँता लगा रहता है। इसी रमणीय नगरी में अवस्थित आध्यात्मिक ऊर्जा का स्रोत नवलखा महल, जहाँ विराजकर युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश का प्रणयन सम्पूर्ण किया था।

प्रात: स्मरणीय राणा प्रताप के शौर्य की गाथा से महिमामण्डित, भक्ति, शौर्य तथा आध्यात्म के भावों से आप्लावित इस नगरी में आयोज्य

१८वें भव्य सत्यार्थ प्रकाश महोत्सव

(३१ अक्टूबर से २ नवम्बर २०१५)

के पावन अवसर पर विश्वभर के भाई-बहिन आमंत्रित हैं। आप, अनेकानेक संन्यासीवृन्द, वेद -प्रवक्ताओं व आर्य नेतृत्व की उपस्थिति से शोभायमान इस महोत्सव में पधारने हेतु अभी से अपना मानस बना, रिजर्वेशन आदि करा लें। हमें सूचित करें।

निवेदक - श्रीमद दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर
सम्पर्क सूत्र-०२९४-२४१७६९४, ९०८२९०६३११०
सुरेश पटौडी व्यवस्थापक न्यास